देखन में छोटे लगें घाव करें गम्भीर

भाग २



–श्रीराम शर्मा आचार्य

देखन में छोटे लगें घाव करें गंभीर

(प्रेरक प्रसंग संग्रह)

(द्वितीय भाग)

लेखक
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१५ मूल्य : १०.०० रुपये

प्रकाशक
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-३

लेखक
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

पुनरावृत्ति सन् २०१५

मूल्य १० .०० रुपये

मुद्रक
युग निर्माण योजना प्रेस
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-३
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

यह संकलन

'युग निर्माण योजना' में महापुरुषों के जीवन प्रसंगों, सत्य घटनाओं, लघु कहानियों, बोध कथाओं आदि को प्रकाशित करने की अविच्छिन्न परंपरा रही है। आकार में छोटे परंतु प्रेरक, मनोरंजक एवं रोचक होने के कारण सहज ही इन्हें पढ़ने की इच्छा होती ही है। कभी-कभी ये प्रसंग मनुष्य के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन भी उपस्थित कर देते हैं, उसकी जीवन धारा को ही बदल देते हैं। यदि इतना न भी सही तो भी ये हमारे मन को छूकर उसे प्रकट-अप्रकट रूप से प्रभावित तो करते ही हैं। इनकी मर्मस्पर्शिता ही इनकी सबसे बड़ी विशेषता है। इनके बारे में निश्चयात्मक रूप से यह कहा जा सकता है कि देखन में छोटे लगें घाव करें गंभीर।

एक बात और। प्रेरक प्रसंग प्रायः सभी वर्गों के पाठकों के लिए उपयोगी एवं रोचक होते हैं। बाल, युवा, वृद्ध, नर-नारी, छात्र, नेता-अभिनेता-व्यवसायी आदि सभी इन्हें पढ़ने में रुचि लेते हैं। जब भी समय मिला एक दो प्रसंग पढ़ लिया। प्रेरणा मिली तो चिंतन-मनन में डूब गए। अवसाद, विषाद, निराशा के क्षणों में तो ये परमौषधि का काम करते हैं।

इन्हीं सब विशेषताओं के कारण 'युग निर्माण योजना' में प्रकाशित विभिन्न प्रसंगादि को संकलित कर हम कई भागों में इन्हें प्रकाशित कर रहे हैं। आशा है हमारा पाठक वर्ग इन लघु पुस्तिकाओं का अवश्य लाभ उठाएगा।

—**प्रकाशक**

विषयानुक्रम

विषय		पृष्ठ
१.	नारी का शील-राष्ट्र की संपत्ति	५
२.	निराश्रितों की आश्रयदाता सिस्टर डुलसे	७
३.	अंतः से निस्सृत करुणा ने दिशा धारा ही बदल दी	९
४.	फ्रांस की लक्ष्मीबाई जोन ऑफ आर्क	१२
५.	करुणा फूटी, अनुदानों की वर्षा होने लगी	१४
६.	संकट टल गया	१६
७.	मनुष्यता मरती नहीं	१८
८.	श्रम-सेवा के लिए कोई अपवाद नहीं	२२
९.	आत्मसंतोष की सिद्धि	२४
१०.	ईश्वर का ऋण	२६
११.	आज के युग का ऋषि	२८
१२.	करुणा के पुजारी का आत्मोत्सर्ग	३०
१३.	मानवता की पीर पहचानें	३२
१४.	ईश्वरीय न्याय यों प्रकट होता है	३४
१५.	मुहूर्त से बड़ा है विवेक	३६
१६.	संत कन्फ्यूशियस और ज्ञानी बुढ़िया	३८
१७.	एक क्रांतिकारी राजकुमार	४०
१८.	जिम्मेदारी समझी और मौत से जूझ गए	४५
१९.	हिम्मत इंसान की, मदद भगवान की	४८
२०.	तुम किसी को मारोगे नहीं!	५०
२१.	परिस्थितियाँ, जो निर्बल को भी साहसी बना देती हैं	५२

नारी का शील-राष्ट्र की संपत्ति

कैसोविया गणराज्य के एक बड़े नगर गुइनपापर में चार व्यक्तियों को एक स्त्री के साथ बलात्कार करने के मामले में मृत्युदंड की सजा दी गई। इस मुकदमे की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि किसी भी वकील ने इस मुकदमे की पैरवी करना स्वीकार नहीं किया। सुनवाई कुल चार दिन हुई और पाँचवें दिन निर्णय देकर छठवें दिन चारों अपराधियों को निर्णयानुसार शूली पर चढ़ा दिया गया।

इस्तगासे के अनुसार १९ वर्षीय युवती मेट्रन बाविना किसी काम से बाजार जा रही थी। विद्यालय और सड़क के बीच थोड़ा फासला पड़ता था, वहीं अभियुक्तों ने उसे पकड़ लिया तथा बंदूक दिखाकर उसे डराया और उसके साथ बलात्कार किया। तुरंत बाद ही चारों अभियुक्तों को हिरासत में ले लिया गया। युवती की शिनाख्त के अतिरिक्त कई अन्य प्रत्यक्ष प्रमाण थे, जिनके कारण सभी चारों बदमाशों ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

जब मामला अदालत में लाया गया, उस समय सर्वप्रथम आदर्श उपस्थित किया एडवोकेट संघ ने, जिसकी तुरंत बैठक की गई। बैठक के अध्यक्ष की इस अपील पर कि जहाँ तक अन्य सामाजिक मामले हैं, उनमें थोड़ी-बहुत असमानता हो सकती है, पर स्त्रियों की सुरक्षा और उनके शील की रक्षा सारे समाज के लिए एक-सी है। हम यह कभी सहन नहीं कर सकते कि जिन स्त्रियों के चरित्र के कारण हम पुरुषों का भाग्य और चरित्र निर्मित होता है, उनको लोग बंदूक से डराकर पथभ्रष्ट किया करें। यह प्रत्येक व्यक्ति के साथ विश्वासघात है, इसलिए ऐसे प्रत्येक दुराचरणशील व्यक्ति को कभी भी माफ नहीं किया जाना चाहिए। हमें ऐसे तत्त्वों को दंड दिलाने में मदद करनी चाहिए। सभी वकीलों की राय एक थी। यह वस्तुतः प्रबुद्ध व्यक्तियों

की विवेकशीलता की विजय थी। यदि अन्य अच्छे लोग भी इसी तरह संगठित होकर बुराइयों से प्रतिरोध करें, तो बुराइयों के अंत होने पर पूर्ण विश्वास किया जा सकता है।

अपराधियों को जब पहले दौर पर ही सहयोग न मिला तो अभियुक्त बुरी तरह घबड़ा गए। सामाजिक अपराधों में जिनकी प्रवृत्ति होती है, वे लोग वास्तव में अपने विकास की सामग्री भी समाज से ही पकड़ते हैं। इस दिशा में कड़ाई बरती जाए और अपराधी चाहे वह बलात्कार के मामले का हो अथवा चोरी का, उसको किसी प्रकार का समर्थन और सहयोग न दिया जाए, तो अभी संसार में सब जगह इतनी व्यवस्था है कि बुरे लोगों को दंड मिले बिना न रहे।

वकील न मिले तो जनता में अपराधियों को जो सहयोग करने वाले तत्त्व थे, उनकी भी हिम्मत टूट गई और एक भी गवाह या सबूत अपराधियों को ढूँढ़े न मिला। लोकमत वकीलों के निर्णय से प्रभावित होकर अपराधियों के विरुद्ध हो चुका था। जजों पर भी इस वातावरण की प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया हुई। इस मामले के लिए तीन जजों की जूरी तुरंत फैसले के लिए बैठाई गई। उसने भी अपना कठोर रवैया अपनाया। मौत की सजा का निर्णय सुनाते हुए विद्वान जजों ने बड़ा उपयुक्त न्याय किया और लिखा—"नारी का शील सारे देश की शील और संपत्ति है। जो उसका अपहरण करता है, उसे देशद्रोही की कोटि में रखा जा सकता है। इसलिए जो सजा राष्ट्र-द्रोह करने वाले को मिलनी चाहिए, उससे कम इन अपराधियों को नहीं। मामले की सुनवाई से अपराध सिद्ध हो गया है, इसलिए चारों अभियुक्तों को फाँसी की सजा दी जाती है।"

इस मामले के तुरंत बाद व्यभिचार के मामलों का औसत कैसोविया में एकदम गिर गया है। हमें भी यह सोचना चाहिए कि क्या भारतवर्ष में भी ऐसा कोई प्रयोग संभव है? क्योंकि इन दिनों यहाँ बुरे लोगों की संख्या तेजी से बढ़ रही है।

निराश्रितों की आश्रयदाता

सिस्टर डुलसे

ब्राजील (दक्षिण अमरीका) के बहिया नगर की एक पुरानी सड़क पर सिस्टर डुलसे चली जा रही थी कि उसे एक करुणाजनक पुकार सुनाई दी—"सिस्टर! मुझे मरने से बचाओ?"

सड़क के किनारे फुटपाथ पर एक फटी चटाई पर एक १२ वर्ष का लड़का मलेरिया ज्वर से काँप रहा था। सिस्टर ने झुक कर उसके सर पर हाथ रखा तो देखा कि वह तप रहा है। यद्यपि सिस्टर डुलसे को अपने 'कन्वेंट' (साधुनियों का मठ) में अध्यापिका की ट्रेनिंग दी गई थी और वह 'नर्स' के काम से अनजान थी, फिर भी इस निराश्रित पीड़ित बालक को देखकर उसकी करुणा का बाँध टूट गया। पर प्रश्न यह था कि वह इस बालक को कहाँ रखे क्योंकि उसका कोई निजी घर न था। उसने सामने निगाह दौड़ाई और देखा कि बहुत-सी गरीबों के रहने की गंदी कोठरियाँ खाली पड़ी हैं और देखा कि मालिकों ने उनको बंद कर रखा है। उसने एक राहगीर से कहा इनमें से एक कोठरी को मेरे लिए खोल दो। राहगीर खिड़की को तोड़कर भीतर घुस गया और दरवाजा खोल कर भाग गया। सिस्टर उस लड़के को कोठरी के भीतर उठा ले गई और शीघ्र ही 'कन्वेंट' में जाकर उसके लिए कुछ दवा, पथ्य और एक झाड़ू लेकर फिर वहाँ पहुँची। उसने अपने हाथ से उस गंदी कोठरी को साफ किया और लड़के को दवा देकर आराम से लिटा दिया।

सिस्टर डुलसे के करुणापूर्ण कार्य की चरचा फैली तो अन्य बीमार और असमर्थ व्यक्ति भी उसके पास आने लगे। जब वह कोठरी भर गई तो उसने दूसरी कोठरी भी खुलवाई और उसमें बीमारों

को रखा। इस प्रकार जब पाँच मकान बीमारों से भर गए तो उनके मालिकों ने सिस्टर डुलसे के विरुद्ध अदालत में दावा किया और उसे मकानों से हट जाने की आज्ञा दी गई। तब उसने गिरिजाघर के बाहर खुले हुए बरामदों में टूटे-फूटे बक्स और कनस्तर आदि खड़े करके उनमें बीमारों को रखा। पर गिरिजाघर में आने वालों को भी इतने बीमारों और लूले-लँगड़े लोगों का दृश्य बुरा लगने लगा और वहाँ से भी हट जाने को कहा गया। उसने देखा कि एक सरकारी 'मार्केट' (मंडी) खाली पड़ा है तो सब बीमारों को उसी में ले जाकर ठहरा दिया। पर दस-पाँच दिन में ही म्युनिसपैलिटी के सफाई कर्मचारियों ने उसका वहाँ रहना भी असंभव कर दिया। अंत में उसने अपने 'कन्वेंट' के पास ही एक गली में बीमारों के रहने की व्यवस्था की और जब वह स्थान भर गया तो वहीं पुराने 'मुर्गी-पालन गृह' में उनको स्थान दिया। वह प्रार्थना करके डॉक्टरों से इन बीमारों की बिना फीस के चिकित्सा कराती और जब आवश्यकता पड़ती तो उनसे ऑपरेशन करने का भी आग्रह करती।

इस प्रकार इस दयालु देवी के आश्रित दीन-दु:खी लोगों की संख्या निरंतर बढ़ती गई, क्योंकि नगर की सात लाख आबादी में से एक लाख व्यक्ति सड़कों और गंदे स्थानों में पड़े जीवन व्यतीत करते थे। सिस्टर डुलसे प्रतिदिन लगभग एक सौ व्यक्तियों को भोजन और सोने का स्थान देती और अपने हाथों से उनकी मरहम पट्टी और सेवा-सुश्रूषा करती।

पर जब इन अनाथ बालकों और निराश्रित लोगों की संख्या निरंतर बढ़ती ही गई और किसी ने कूड़े खाने में फेंका हुआ एक शिशु भी उसको लाकर दे दिया, एक मरणासन्न घायल व्यक्ति भी उसकी शरण में आ पड़ा तो बहिया नगर से प्राप्त हो सकने वाले साधन अपर्याप्त सिद्ध होने लगे। तब वह उत्तरी अमरीका वालों से सहायता प्राप्त करने का विचार करने लगी। इसी बीच एक दिन 'जनरल मोटर्स' के प्रतिनिधि ने उसको सूचित किया—"मुझे आज सड़क पर

पड़ी एक बीमार स्त्री मिली है। मैं उसके लिए व्यवस्था करने की दिन भर कोशिश करता रहा पर कहीं स्थान न मिल सका। क्या आप उसे रख सकेंगी।'' बीस मिनिट के भीतर ही डुलसे भागती हुई वहाँ पहुँची और उस स्त्री को जो लगभग बेहोश थी, एक ट्रक में लिटाकर अपने वहाँ ले आई। 'जनरल मोटर्स' के प्रतिनिधि को जिसने निराश्रितों के इस 'अस्पताल' का दृश्य देखा था, बड़ी लज्जा अनुभव हुई कि हम साधन-संपन्न जो काम न कर सके, वह इस साधन रहित सिस्टर ने कर दिखाया है। उसी समय उसने इस कार्य में सहयोग देने का निश्चय कर लिया और अपने अमरीकन मित्रों की एक 'सहायता कमेटी' बना दी। इन लोगों ने अमरीका की परोपकारी संस्थाओं से लिखा-पढ़ी शुरू की और कुछ ही दिनों में डेट्रियट के 'वर्ल्ड मैडीसिन रिलीफ इंस्टीट्यूट' की तरफ से दवाइयाँ आने लगीं। 'फूड एंड पीस आर्गेनिजेशन' की तरफ से अनेक खाद्य पदार्थ भेजे गए। 'कैथोलिक रिलीफ सर्विस' की तरफ से बहुत-सा सूखा दूध और कपड़े प्राप्त हुए। धीरे-धीरे डुलसे के सहायकों की संख्या बढ़ने लगी और उसने गरीब रोगियों के लिए एक नई इमारत बनवा कर उसमें १५० बीमारों के रहने की व्यवस्था कर दी। वह सड़कों पर फिरने वाले अनाथ और आवारा लड़कों को खाना और कपड़ा देकर सभ्य और शिक्षित बनाने का भी प्रयत्न करती, जिससे वे समाज के लिए अभिशाप न होकर उपयोगी सदस्य बन सकें।

अंतः से निस्सृत करुणा ने दिशा धारा ही बदल दी

वह ऐश्वर्य में ही जन्मी और पली थी। अभाव, असुविधा, दुःख और दारिद्र्य से उसका कभी पाला नहीं पड़ा था। खेल-कूद और अलमस्ती में बचपन बीता। किशोरावस्था में उसने प्रवेश किया। प्रकृति के अंतराल में बिखरे सौंदर्य का दर्शन करना उसका प्रिय शौक था। शहरी जीवन को छोड़कर वह

एकाकी ही घोड़े पर सवार होकर दुर्गम वन प्रदेशों, ग्रामीण क्षेत्रों की सैर करने निकल जाती थी। तब १९१० का वर्ष था। वह आस्ट्रेलिया के एक आदिवासी क्षेत्र में सैर के लिए घोड़े पर सवार होकर निकली थी।

एकाग्रता भंग हुई एक झोंपड़ी से आती हुई बच्चों की तेज रुदन की आवाज सुनकर। शायद दूसरी कोई आवाज होती तो वह ध्यान नहीं देती। पर न जाने कौन सी प्रेरणा उस रुदन के साथ जुड़ी हुई थी कि बरबस ही हाथ घोड़े की लगाम पर उसे रोकने के लिए चला गया। उसने घोड़े को रोका और नीचे उतर गयी तथा चल पड़ी उस झोंपड़ी की ओर जिधर से बच्चों के रोने की आवाज आ रही थी। आज उसके सामने एक ऐसा दृश्य था जिसे देखकर उसकी अंतरात्मा रो पड़ी। घास-फूस के एक छोटे से झोंपड़े में छः बच्चे जमीन पर लेटे हुए थे। सबको तेज बुखार था। जमीन पर नाम मात्र का चिथड़ों का एक बिस्तर था। एक वृद्धा झोंपड़े के एक किनारे बैठी खाँस रही थी। लगता था वह भी कुछ ही दिनों की मेहमान है। जिसे अब तक वैभव और ऐश्वर्य से ही अवकाश नहीं मिलता था; आज उसे पता चला कि संसार में दुःख, कष्ट, दैन्य और दारिद्र्य भी कम नहीं है। भीतर का मातृत्व, बच्चों की कारुणिक दशा को देखकर उमड़ पड़ा। वृद्धा से उसने बच्चों के विषय में विस्तृत जानकारी ली तो मालूम हुआ कि बच्चों के माता-पिता हैजे के शिकार हो गए। बच्चों में से चार लकवा से ग्रस्त हैं। अभिभावक के नाम पर मात्र वृद्धा ही जीवित बची है और वह भी क्षयरोग की शिकार है।

युवती की अंतरात्मा ने प्रश्न किया—"इनकी देखभाल कौन करेगा? क्या ये इसी प्रकार कष्ट और पीड़ा से दम तोड़ देंगे।" भीतर से आवाज आयी—"नहीं! ऐसा कदापि नहीं होगा। तेरे रहते ये मासूम बच्चे अकाल मृत्यु की गोद में सो

जाएँ ऐसा संभव नहीं। '' आज युवती को ऐसा लगा जैसे उसे इसी कार्य के लिए यहाँ भेजा गया हो। तुरंत घोड़े पर बैठी, ऐड़ लगायी और निकटवर्ती एक चिकित्सक के पास जा पहुँची। घोड़े पर साथ बिठाकर वह चिकित्सक को कुछ ही समय में ले आयी। आवश्यक सामयिक उपचार करने के बाद चिकित्सक ने कहा—बच्चों की स्थिति गंभीर है। इन्हें स्थायी देख-रेख एवं सेवा-सुश्रूषा की जरूरत है। युवती ने कहा—"डॉक्टर! आप चिंता न करें, इनकी पूरी देख-रेख की जिम्मेदारी मैं लेती हूँ। निरंतर की भाव-भरी सेवा का परिणाम यह निकला कि सभी बच्चे ठीक हो गए।''

उसने अनाथ बच्चों को अपने परिवार का अभिन्न सदस्य बना लिया, पर उसे मात्र इतने से संतुष्टि नहीं मिली, उसने अपने भावी जीवन के विषय में एक क्रांतिकारी निर्णय ले लिया। वह नर्सिंग की ट्रेनिंग लेने लगी। उसे पीड़ितों की सेवा से जो आंतरिक संतोष एवं आनंद की प्राप्ति हुई वह गँवाना नहीं चाहती थी। अध्यवसाय द्वारा उसने अपनी योग्यताएँ बढ़ानी आरंभ कर दी। प्रयास से कुछ भी असंभव नहीं है इस सत्य को युवती ने एक कुशल चिकित्सक के रूप में अपनी योग्यता विकसित करके दिखा दिया।

सगे-संबंधियों ने उसे विवाह कर लेने का परामर्श दिया, पर उसने उत्तर दिया—"जब सारा संसार ही दीन अवस्था में पड़ा हो तो कुछ ऐसे व्यक्ति भी निकलने चाहिए जो सांसारिक सुखों को स्वेच्छा से त्यागकर अपने आपको जन सेवा के कार्यों में नियोजित कर सकें। मेरे लिए दुखियों की सेवा ही शादी है। सिस्टर एलिजाबेथ केनी के नाम से प्रख्यात इस महिला को सारा विश्व जानता है। अनेकों विश्वविद्यालयों ने उसकी चिकित्सा सेवाओं के लिए उसे डाक्टरेट की उपाधि से विभूषित किया।''



फ्रांस की लक्ष्मीबाई
जोन ऑफ आर्क

इंगलैंड के भयंकर आक्रमण से फ्रांस के सैनिकों का मनोबल टूटता जा रहा था। सैनिक ही नहीं वहाँ के हर नागरिक को यह विश्वास हो चला था कि अब फ्रांस को कोई नहीं बचा सकता। गुलामी की जंजीरें पहननी पड़ेंगी, युद्ध तो जारी था पर चारों ओर से पराजय की ही खबरें आ रही थीं। आत्मविश्वास इस कदर गिर गया था कि दुश्मनों से संघर्ष लेने का कोई कारगर उपाय सोचते नहीं बन पा रहा था। स्थिति बिगड़ती देखकर फ्रांस के राजा चार्ल्स अब समर्पण की बात सोचने लगे ताकि कम से कम नर-संहार तो रुक सके।

सामान्य व्यक्ति निराश और हताश हो चुके थे पर वह युवती किसी दूसरी ही मिट्टी की बनी हुई थी। उसकी नसों में देशभक्ति का रक्त प्रवाहित हो रहा था। यह जीवन भी किस काम का, जो मातृभूमि के लिए देशवासियों के काम न आ सके। गुलामी में जीने से तो मरना बेहतर। कायरों की तरह समर्पण कर देने तथा सदा के लिए पीढ़ियों की लानत सहते रहने की अपेक्षा तो लड़ते हुए मर-मिटना कहीं अधिक श्रेयष्कर है। जैसे-जैसे ये विचार उसके मन-मस्तिष्क को आंदोलित करते, उसी अनुपात में कुछ कर गुजरने की प्रेरणा उठती। बाजुएँ फड़कने लगती। स्वाभिमान हुँकार मारता।

दुश्मन से लोहा लेने के लिए उसके पास न शस्त्र थे, नहीं सैनिकों का संगठन। अकेले वह करे भी तो क्या। पर एक विचार मन में कौंधा। क्यों न चार्ल्स को अपनी योजना बताई जाए।

घर पर बिना किसी को कुछ बताए वह चल पड़ी फ्रांस के तत्कालीन राजा-चार्ल्स सप्तम से मिलने। फ्रांस को इंग्लैंड के आक्रमण से बचाने के लिए उसने अपने किए गए निश्चय से

चार्ल्स को अवगत कराया। राजा स्वयं भी निराश हो चुका था। पर इस युवती के मिलते ही उसे ऐसा लगा जैसे किसी ने प्राण फूँक दिए हों। खोया मनोबल वापस लौटा। मूर्च्छित आत्मविश्वास को जगने का अवसर मिला। राजा को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे कि फ्रांस के परित्राण के लिए सहयोग देने हेतु स्वर्गलोक से साक्षात किसी देवी का अवतरण हुआ हो।

"देवी! तुम जो माँगों हम देने को तैयार हैं। फ्रांस की रक्षा के लिए समूचा कोष, सैनिकों का दल तथा मेरा सर्वस्व प्रस्तुत है"- राजा ने निवेदन किया। उस युवती को और क्या चाहिए था, जिन साधनों की कमी पड़ रही थी, वे मिल गए। सेना का नेतृत्व करने वह स्वयं चल पड़ी।

अप्रैल १४२९ का महीना फ्रांस के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में लिखा गया। उसी प्रकार जिस तरह कि भारत की स्वतंत्रता संग्राम का १८५७ का वर्ष। वह वीरांगना घोड़े पर सवार होकर हाथ में बल्लम लिए सेना का नेतृत्व कर रही थी। उधर सैनिकों में भी यह विश्वास सुदृढ़ हो चुका था कि यह कोई साधारण औरत नहीं बस युद्ध की कोई देवी है जिसका अवतरण ही फ्रांस के उद्धार के लिए हुआ है। सैनिकों में अद्‌भुत जोश का संचार हुआ। जो कभी पराजय की कल्पना में इतने डूबे रहते कि दुश्मन को अपना मंतव्य पूरा करने में सफलता मिल जाती। वे ही अब दूने साहस से लड़ रहे थे। अब फ्रांस का एक सैनिक दुश्मन के बीस-बीस सैनिकों के के लिए भी भारी पड़ रहा था, रणचंडी की तरह उस युवती के प्रहार से इंग्लैंड की सेना के पैर उखड़ने लगे। अंततः इंग्लैंड की सेना को पराजित होकर वापस लौटना पड़ा।

विजय श्री फ्रांस के हाथ लगी पर उसका कारण बनी वह महिला जिसे संसार 'जोन ऑफ आर्क' के नाम से जानता है। पुनः सिंहासनारूढ़ होने पर चार्ल्स सप्तम ने आर्क को अपने समकक्ष आसन पर बिठाते हुए भावभरे शब्दों में एक आयोजन में उद्‌गार

व्यक्त किए–"वीरता की इस साक्षात देवी के कारण ही फ्रांस की सुरक्षा हो सकी। हम सभी ऋणी हैं तथा उसके किए गए उपकार को नहीं भुला सकते। जीवट और मनोबल को जागृत करने की जो ऐतिहासिक भूमिका उस महिला ने निभायी है, उससे आने वाली पीढ़ियाँ भी प्रेरणा लेंगी।"

करुणा फूटी, अनुदानों की वर्षा होने लगी

हालैंड के एक दयालु व्यक्ति ने अपंगों–अपाहिजों की राहत के लिए एक योजना बनायी। उन्हें स्वावलंबी बनाने की दृष्टि से आजीविका के साधन जुटाने, आवास की व्यवस्था बनाने के लिए एक ग्राम बसाने की योजना जितनी बड़ी और महान थी, उतनी ही खरचीली भी थी। उसने अपनी जो थोड़ी संपदा थी, इस महान कार्य के लिए झोंक दी पर वह ऊँट के मुँह में जीरा जितनी ही सिद्ध हुई। इस कल्याणकारी प्रयोजन के पूरा होने में सबसे बड़ी अड़चन पैसे की आ रही थी। सरकारी संचार एवं प्रसारण अधिकारियों की सहानुभूति अर्जित करके उन्होंने टेलीविजन के माध्यम से उदारमना व्यक्तियों को इस योजना में सहयोग के लिए आह्वान किया। प्रतिक्रिया स्वरूप थोड़ा अनुदान भी मिला पर वह इतना कम था कि उससे भी बात बनती नजर नहीं आयी।

इस प्रसारण को हालैंड की एक युवती ने भी सुना। थोड़े–थोड़े पैसे बचाकर उसने अपनी शादी के लिए जमा कर रखे थे, भविष्य के सपने साकार करने के लिए उसने थोड़े से नए वस्त्र भी बनवा लिए थे, जो सुरक्षित रखे थे। भौतिक संपदा के नाम पर उसके पास इसके अतिरिक्त कुछ न था। पर उसका हृदय जितना भावुक था, उतना ही उदार था। परदु:ख पीड़ा से वह अत्यंत द्रवित हो उठती थी। जिस घर में वह काम करती थी वहाँ टेलिविजन पर उसने भी वही पुकार सुनी, जिसमें अपंगों के सहयोग के लिए याचना की गई थी। तब से उसके

भीतर से निरंतर यह आवाज मानस पटल को झकझोरती रही कि उसे भी कुछ करना चाहिए।

वह क्या कर सकती है? इस पर बारंबार विचार किया तो पाया कि जो थोड़े पैसे और वस्त्र अपनी शादी के लिए संजोकर रखे हैं उन्हें सहर्ष अपंग भाइयों के लिए दे डालना चाहिए। थोड़ी देर के लिए बुद्धि आड़े आई, उसने दलील दी—"तेरे विवाह का क्या होगा?" उत्तर दूसरे ही क्षण हृदय ने दिया—"विवाह को कुछ समय के लिए टाला भी जा सकता है, परपीड़ा निवारण का यह सुअवसर फिर हाथ नहीं आने वाला है।" बुद्धि ने प्रतिवाद किया—"इस अल्प अनुदान से क्या होगा?" भीतर की करुणा ने उत्तर दिया—"विपन्नताओं में भी उदारता प्रस्तुत करने की परंपरा तो बनेगी।" मन को ढाढ़स बँधा। पैसे और वस्त्र लेकर वह उस व्यक्ति के पास पहुँची जिसने सहयोग की पुकार की थी।

सकुचाते हुए उसने अपना नगण्य भावभरा अनुदान प्रस्तुत करते हुए कहा—"मेरे पास देने को इसके अतिरिक्त कुछ नहीं है। असमर्थ, असहाय भाइयों के लिए यह सौभाग्य की बात होगी। प्रबंधक ने लड़की का पूरा परिचय मालूम किया तो उसकी कारुणिक उदारता से अभिभूत हो उठा। उसका हार्दिक अभिनंदन करते हुए प्रबंधक ने कहा—"मादाम! तुमने अपना सर्वस्व दे डाला। पर योजना की सफलता के लिए मैं तुम्हें एक कष्ट और दूँगा। मुझे तुम्हारी सेवा की जरूरत होगी। तुम्हें टेलीविजन पर अपनी दास्तान बताते हुए स्वयं अनुदान के लिए जन-मानस से अपील करनी होगी। मेरा विश्वास है तुम्हारे सहयोग से वह महान प्रयोजन अवश्य पूरा होगा। युवती इसके लिए सहमत हो गयी।"

करुणा ही करुणा को उभारती है। कुमारी कार्लेविल नामक उस लड़की के अंत:करण से निकलने वाली मार्मिक वाणी ने टेलीविजन श्रोताओं पर जादू जैसा असर किया। उसकी अंत: संवेदनाओं ने दूसरों की संवेदनाओं को उभारा। अनुदानों की वर्षा होने लगी। इतनी अधिक

धनराशि एकत्रित हुई कि जो कार्य धन के अभाव में रुका था, वह देखते ही देखते कुछ ही दिनों में पूरा हो गया। अपंगों के विकास के लिए बसाए गए गाँव के लिए कार्लविल के नाम को आज भी बड़ी श्रद्धा के साथ स्मरण किया जाता है।

संकट टल गया

भ्रष्टाचार, शोषण और लूट-खसोट की प्रवृत्तियों को रोकने लिए तथा राजनीतिक क्षेत्रों में भी इन विकृतियों को दूर करने के लिए अमेरिका के कुछ बुद्धिजीवी और विचारशील नेताओं ने प्रोग्रेसिव पार्टी का गठन किया था। इस पार्टी का घोषित कार्यक्रम था, शोषण और भ्रष्टाचार का उन्मूलन, नागरिक अधिकारों की सुरक्षा, स्वच्छ प्रशासन तथा पददलितों और शोषितों का उद्धार; इन्हीं कार्यक्रमों को लेकर थियोडोर रूजवेल्ट ने सन् १९१२ में राष्ट्रपति का चुनाव लड़ा था और अच्छे मतों से विजयी भी हुए थे।

अमेरिका के जागरूक जनमत ने बिना जाने-समझे और देखे-परखे ही इस पार्टी के उम्मीदवारों को अपना समर्थन नहीं दिया था। वहाँ के मतदाता थियोडोर रूजवेल्ट की निष्ठा, साहस और प्रशासनिक दक्षता से भली-भाँति अवगत थे। समय पर रूजवेल्ट ने इस घोषित कार्यक्रम के लिए जिस साहसपूर्ण सक्रियता का परिचय दिया था उनकी एक नहीं-अनेक मिसालें जनमानस की स्मृति में कौंध रही थीं।

इन्हीं साहसपूर्ण कारनामों की एक घटना है। मिलवोंकी नामक नगर में पार्टी की ओर से एक सभा का आयोजन किया गया था। सभा आयोजन का उद्देश्य था उस क्षेत्र की निम्न वर्गीय जनता के प्रति समर्थ और संपन्न व्यक्तियों द्वारा किया जाने वाला अनाचार। रूजवेल्ट को न तो सस्ती सफलता की कामना थी और न कोई स्वार्थ था। राजनीति में तो वे विशुद्ध जनसेवा के उद्देश्य से प्रेरित होकर आए थे।

उस दिन मिलवॉकी की सभा में जाने के लिए वे अपने होटल से उतरे और कार में बैठ ही रहे थे कि एक व्यक्ति अजीव से अंदाज में उनके पास आया। रूजवेल्ट ने अपना एक पैर कार के अंदर रखा था और दूसरा रखने ही जा रहे थे कि उस व्यक्ति ने उनके सीने का निशाना बनाकर गोली दाग दी। गोली ठीक निशाने पर लगी और रूजवेल्ट लड़खड़ाने लगे। वहाँ उपस्थित व्यक्तियों ने हत्या का प्रयत्न करने वाले इस बदमाश को पकड़ लिया। गोली चलने की आवाज सुनकर कुछ और लोग दौड़े आए और हत्यारे को लातों-घूँसों से मारने लगे। अपने आपको संभालते हुए रूजवेल्ट ने लोगों से कहा—"बेचारे इस गरीब को मत मारो। इसे मेरे पास लाओ।"

उसे पुलिस की हिरात में देकर उसके प्राण बचाने की हिदायत देते हुए रूजवेल्ट मोटर में जा बैठे और ड्रायवर एक बारगी आश्चर्य में पड़ा। परंतु रूजवेल्ट ने एक रूमाल से अपने सीने को कसकर बाँध लिया था और ड्रायवर को पुनः वही आदेश दिया। जब वे सभा भवन पहुँचे तो उससे पूर्व ही उक्त घटना का समाचार पहुँच गया था। लोग चिंतित से रूजवेल्ट को सभा मंच की ओर बढ़ते देख रहे थे।

मंच पर चढ़ कर उन्होंने धीमी आवाज में अपना भाषण शुरू किया और कहा—"मेरे सीने में एक गोली है फिर भी मैं भरसक प्रयत्न करूँगा। लेकिन आप मुझे जोर से न बोल पाने के लिए क्षमा करेंगे।"

इसके बाद उन्होंने अपना भाषण पूरा किया। घंटे भर बाद जब भाषण समाप्त हुआ तो उन्हें अस्पताल ले जाया गया। शल्य क्रिया द्वारा सीने से गोली निकाली गयी। गोली ठीक उनके कलेजे से एक इंच दूर रह गयी थी। डॉक्टरों ने कहा—"आपको तो गोली लगते ही सीधे यहाँ आ जाना चाहिए था। भाषण करते समय क्या आप अपने प्राणों को खतरे में महसूस नहीं कर रहे थे?"

"जब मेरा दिमाग एक लक्ष्य के पीछे लगा हो तो मैं अपने प्राणों के बारे में कैसे सोच सकता था?" रूजवेल्ट ने कहा। वस्तुतः एक तो उनका शरीर इतना पुष्ट और बलिष्ट, दूसरे मानसिक एकाग्रता के अभ्यास ने उनका ध्यान उस ओर जाने ही नहीं दिया परिणामस्वरूप उनके प्राणों का संकट टल गया। ☐

मनुष्यता मरती नहीं

मनुष्य न तो दानव है और न देव। वह दोनों के बीच की स्थिति है। मनुष्य यदि अच्छी दिशा में चल पड़ता है तो उसका देवत्व विकसित होने लगता है और यदि वह गलत राह पर चल पड़ता है तो वह प्रतिदिन दानव बनता चला जाता है। ऐसी स्थिति में उसकी मनुष्यता पर आवरण भले ही पड़ जाए पर वह मरती नहीं और समय पाकर पुनः उसे देवत्व के मार्ग पर, मानवता के सही पथ पर घसीट लाती है। वाल्मीकि, अंगुलिमाल ऐसे कितने ही उदाहरण इतिहास के पृष्ठों में भरे पड़े हैं जब मनुष्य ने खोए देवत्व को जगाया है। ऐसी ही एक घटना नेपोलियन के शासनकाल में भी घटित हुई।

फ्रांस की राज्य क्रांति के बाद पेरिस अपराधियों का गढ़ सा बन गया था। क्रांति के समय वहाँ जाने कहाँ-कहाँ से अपराधी आ इकट्ठे हुए थे। अपराध की घटनाएँ दिन पर दिन बढ़ रही थीं। किंतु अपराधी पकड़ में नहीं आ रहे थे। पुलिस प्रधान हेनरी परेशान था। पकड़े जाने पर भी सबूत के अभाव में अपराधियों को छोड़ देना पड़ता था।

नागरिकों के एक शिष्ट मंडल ने हेनरी से मुलाकात की और पुलिस की असफलता पर उन्होंने बड़ी खीझ प्रकट की। साथ ही इस प्रकार बढ़ते अपराध को रोकने के लिए कोई अच्छा सा तरीका काम में लेने की राय दी। हेनरी बड़ी देर तक विचार मग्न रहे। फिर उन्हें जैसे समस्या का कोई समाधान मिल गया हो, उन्होंने

अपने सहकारी को बुलाया और पूछा—"इस समय पेरिस का सबसे बड़ा अपराधी कौन है?"

उत्तर मिला—"मिडोक।"

"उसके विरुद्ध क्या आरोप है?"

"चोरी, चोरी के माल की खरीद, जाल-फरेब, नकली मुद्रा चलाना और क्या-क्या कुकर्म हैं जिनमें वह माहिर नहीं है।"

"उसे बुलाया जाए।"

हेनरी मनुष्य की सहज सज्जनता के विश्वासी थे। वे सोचने लगे—"मनुष्य की प्रतिभा और योग्यता यदि गलत दिशा में प्रयुक्त होने लग जाएं तो वह कहर ढा देती है। यदि उसे सही दिशा में मोड़ दिया जाए तो वही समाज के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है। शायद मिडोक के साथ भी यह संभव हो सके। प्रयास करने में क्या हरज है।" उधर मिडोक भी अपने इस समाज विरोधी कर्मों को करते-करते और आत्म प्रताड़ना सहते-सहते बेजार हो चला था। वह एक सज्जन व्यक्ति की तरह जीवन-यापन करने की सोचता था किंतु उसे राह दिखाई नहीं पड़ती थी।

फ्राकोया युनीज मिडोक पुलिस प्रधान हेनरी के सामने उपस्थित हुआ। हेनरी ने उससे कहा—"देखो मि० मिडोक! तुम बहुत योग्य और तेज आदमी हो। तुम्हारी इन विशेषताओं का लाभ अभी अपराधी उठा रहे हैं जिससे जनता को बड़ा नुकसान उठाना पड़ रहा है। तुम्हारी इसी योग्यता और विशेषता का उपयोग जनता के हित में होने लगे तो तुम्हें कोई हरज नहीं होगा, बोलो होगा।"

"नहीं होगा।"

"तो हमें तुम्हारी आवश्यकता है, अपराधियों को रोकने के लिए। यह समझ लो कि मेरे ऊपर जो उत्तरदायित्व है वह तुम्हारा ही है। ऐसी स्थिति में तुम क्या करोगे।"

"जो आप कहेंगे।" प्रसन्नता के आवेग में भरकर मिडोक ने कहा।

"तुम्हें अपराधियों को पकड़ने में हमारी सहायता करनी होगी।

इसके लिए तुम्हें पूरा-पूरा पारिश्रमिक भी मिलेगा और श्रेय, सम्मान भी।''

मिडोक हेनरी के बताए अनुसार काम करने पर तैयार हो गया। मिडोक ने उनके विश्वास को कभी तोड़ा नहीं। देखते ही देखते उसने कई ऐसे अपराधियों को पकड़वाया जो कभी पुलिस के हत्थे नहीं चढ़े थे। उनके विरुद्ध पक्के सबूत भी उसने जुटाए। वह दुनिया का पहला जासूस कहलाया। उसके लिए १८१२ में 'सूरते' नामक एक पृथक विभाग बनाय गया जिसमें उसके अतिरिक्त उसके चार सहकारी भी थे। अपराधियों के पकड़ने के लिए वह अपनी जान की बाजी लगा देता था। अपराधी अब उसके नाम से ही काँपते थे। पंद्रह वर्ष तक उसने जनसेवा की और १८२८ में वह रिटायर हुआ।

अवकाश ग्रहण करने पर उसने अपनी जीवनी लिखी जिसमें उसने यह स्पष्ट किया कि अपराध व समाज विरोधी कृत्य करने पर किस प्रकार वह अपनी भीतरी चेतनाओं द्वारा प्रताड़ित किया जाता रहा था। उस प्रताड़ना को नहीं सह पाने के कारण वह शराब का सहारा लेता था। भले आदमी का जीवन जीने के लिए वह कितना तरस गया था। जब उसे सम्मानित जीवन जीने का अवसर मिला तो वह कितना प्रसन्न हुआ। उसने रिटायर होने पर कागज का एक कारखाना भी खोला पर वह चल नहीं सका। उसमें मिडोक को बड़ा घाटा उठाना पड़ा था।

उसके अंतिम दिन बड़े कष्टों, अभावों और संघर्षों में गुजरे। उसके शुभाकांक्षी हेनरी अब जीवित नहीं रहे थे। व्यवसाय में घाटा पड़ चुका था। ऊपर से उन अपराधियों ने, जिन्हें उसने पकड़वाया था, उससे बदला लेना आरंभ कर दिया था। ऐसी विकट परिस्थितियों से हार नहीं मानते हुए वह भले आदमी का जीवन जीता रहा। उसने फिर अपराधों की ओर मुँह नहीं किया। वरन उन अपराधियों की मार व तिरस्कार सहते हुए उसने उन्हें अब घृणित, गर्हित काम छोड़कर मेहनत की कमाई खाने के लिए प्रेरित किया। वह उन्हें कहता— ''देखो, एक दिन मैं पेरिस का माना हुआ अपराधी था। मेरे पास सोना,

चाँदी, सिक्के शराब और दबदबा था। किंतु वह आत्मसंतोष नहीं था जिसके बिना हर व्यक्त कंगाल रहता है। आज मेरे पास वह सब कुछ नहीं है, किंतु मैं एक भले आदमी की तरह मेहनत और ईमानदारी का जीवन जी रहा हूँ। इसमें मुझे बड़ा सुख मिलता है, संतोष मिलता है। आज के कष्ट और अभाव मेरे उन पापों की ही सजा हैं जो मैंने पहले किए। तुम भी चाहो तो इसी प्रकार अपना जीवन सुधार सकते हो।''

मिडोक की इन बातों को कई अपराध व्यवसायी तो हँसकर टाल देते और कुछ उसके मुँह पर ही कह देते—''क्या कहने, सौ-सौ चूहे खाके बिल्ली रानी हज करने जा रही है।''

''हाँ तुम ठीक कहते हो कितना ही घृणित और अपराधी जीवन व्यतीत करने पर भी हमारे भीतर बैठा मनुष्य मरता नहीं वरन हमें सही मार्ग पर चलने को प्रेरित करता है। कपड़े पर मैल चढ़ गया तो क्या वह धुल नहीं सकता। साबुन लगाने पर वह पुनः उजला हो सकता है। पाप बहुत किए तो आगे भी पाप करते रहें, उनसे विरत न हों, यह कहाँ की बुद्धिमत्ता है। जितने पापों से बच सकते हैं, उतनों से तो बचें।''

मिडोक के इन शब्दों का और उसके जीवन का उन लोगों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा हो सो बात नहीं है। वे भी सोचते, निश्चित रूप से मिडोक ने वह कुछ पाया है जो हमें उपलब्ध नहीं है फलस्वरूप हम अजाना सा अनुभव करते हैं। अपराध करते समय भीतर से एक आवाज सी उठती है, मना करती सी। और वे लोग भी अपराध छोड़कर मेहनत की रूखी रोटी खाने की सोचने लगते। जिनकी आत्मा पर अभी अधिक कालिमा नहीं चढ़ी थी वे लोग उस सोचने को कार्य रूप में परिणत भी कर सके। इस प्रकार मिडोक का अपना जीवन ही नहीं सुधरा और भी कई अपराधी भले आदमी बन गए उससे प्रेरणा लेकर। सच है मनुष्यता कभी मरती नहीं। जिन्होंने नव-जीवन की आशा ही छोड़ दी हो उन्हें यह उदाहरण नया बल प्रदान करेगा।



श्रम-सेवा के लिए कोई अपवाद नहीं

वर्षा ऋतु आयी, एक किसान अपने खेत की ओर चल पड़ा, दूसरे किसान खड़े देख रहे थे उसकी हिम्मत कि वह खेत तक कैसे जाता है? किस प्रकार जोताई करता है? कैसे उसमें धान रोपता है और फसल काटकर किस प्रकार अपने पोषण के लिए बढ़िया चावल तैयार कर अपने अन्न गोदाम में जमा कर लेता है?

कृषि तो किसान का सहज स्वाभाविक कर्म है, इसमें आश्चर्य की क्या बात? दरअसल आश्चर्य यह है कि यह किसान कोई साधारण किसान नहीं, जापान के सम्राट हिरोहिते थे, जिन्होंने महाराज जनक की तरह अपनी आजीविका आप कमाने में श्रेष्ठता मानी। उनके अनुसार सत्ताधीश होने का अर्थ हुकूमत, वैभव, विलासिता और दंभ नहीं, जन-सेवा थी। उन्होंने प्रतिवर्ष वसंत और वर्षा ऋतु में अपने खेतों में काम करके दिखाया कि परिश्रम मनुष्य जीवन का सौंदर्य है। इससे स्वास्थ्य की रक्षा भी होती है।

कुछ लोग पदाधिकार और शासन पा जाने पर यह मान लेते हैं कि उनके जीवन का उद्‌देश्य मात्र सुखोपभोग करना और आदेश चलाना भर रह गया है, पर सम्राट हिरोहितो की मान्यता इस अंधविश्वास से भिन्न थी। उनका कहना था कि शासन की सामाजिक और राष्ट्रीय जिम्मेदारी का पालन करते हुए व्यक्ति को यह नहीं भूलना चाहिए कि वह अंततः एक मनुष्य ही है। सो मानवीय प्रतिभा के विकास का मार्ग किसी स्थिति में नहीं रुकना चाहिए।

वनस्पति शास्त्र के विद्यार्थी होने के कारण बाल्यकाल से उनकी रुचि इस विषय में बड़ी गहन थी। विद्यार्थी जीवन से निकलने के बाद भी हिरोहितो ने अपनी इस रुचि को बनाए ही नहीं रखा वरन वनस्पति शास्त्र तथा जीवन शास्त्र की अपनी जानकारियों को शोध का रूप प्रदान किया। मनुष्य के पास बुद्धि थोड़ी हो, यह कोई निराशाजनक बात नहीं है। दुःखद बात यह होती है कि मनुष्य अपनी बुद्धि का

विवेकजन्य उपयोग नहीं करता, इसलिए जहाँ का तहाँ पड़ा रहता है। हिरोहितों ने अपनी प्रारंभिक जानकारियों के आधार पर वनस्पति शास्त्र व जीवशास्त्र का अध्ययन कर पुस्तकें भी लिखीं।

'इंपीरियल हाउस होल्ड' नामक संस्था, जो शाही परिवार की व्यवस्था करती है, ने एक विशाल, भव्य और आधुनिकतम राजमहल बनाने की योजना तैयार की। पाँच एकड़ भूमि में लगभग ५० करोड़ की लागत से पुख्ता कंकरीट का महल बनाए जाने का प्रस्ताव था। सम्राट के सामने वह योजना आयी तो उन्होंने स्पष्ट शब्दों में उसे अस्वीकार करते हुए अपनी वेदना इन शब्दों में व्यक्त की—अमेरिका की बमबारी से बहुत से लोगों के घर नष्ट हो चुके हैं, देश अभी गरीब है, जिन लोगों के पास खाने को नहीं, जिनके पास मकान नहीं, उन्हीं के पैसों से मेरे लिए भव्य महल बने यह मानवता और देशभक्ति के नाम पर अपमान है।

एक बार उच्च अधिकारियों ने उन पर दबाव डाला कि आप कृषि जैसे छोटे कार्य न किया करें। हिरोहितो ने प्रश्नवाचक स्वर में पूछा—"क्यों मैं अपंग हूँ क्या ?" जब अधिकारियों को जबाव नहीं सूझा तो उन्होंने स्वयं समाधान प्रस्तुत करते हुए कहा—"अपंग का सीधा मतलब है जिसका एक-आध अंग बेकार हो, काम न करता हो, बीमार-दुर्बल हो, यही न। भगवान ने मनुष्य को मन, बुद्धि के साथ शरीर भी दिया है। ये तीनों ही मानवीय सत्ता के अंग हैं। मन का कार्य चिंतन, बुद्धि का कार्य विचारशीलता और शरीर का कार्य है विभिन्न क्रिया-कलापों के रूप में श्रम। जिसका इनमें से यदि एक अंग भी कार्य न करे तो उसे अपंग ही कहा जाएगा। मैं न तो अपंग हूँ और न कभी होना पसंद करूँगा।"

निःसंदेह हममें से कोई यदि बौद्धिक कार्य को बढ़प्पन का द्योतक मानकर शारीरिक श्रम से जी चुराता है तो वह अपंग ही है। सही माने में स्वस्थ और महान तो वही है जो हिरोहितो की तरह शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक दृष्टि से पूर्णरूपेण क्रियाशील और कर्त्तव्यनिष्ठ है।

आत्म-संतोष की सिद्धि

संत राबिया ने प्रभुभक्ति के मार्ग का अवलंबन कर दैन्यपूर्ण किंतु सदाचारी, संतोषी और आत्म-निर्भरता की जीवन नीति को अपनाया। बारह सौ वर्ष पूर्व हुई इस साध्वी महिला ने ईश्वर प्रेम और स्वावलंबन का अनूठा आदर्श ईश्वर के प्रति श्रद्धालु जनों के सम्मुख रखा।

बसरा के कोई संत राबिया से मिलने प्राय: आया करते थे। एक बार उन्होंने राबिया की कुटी के सामने किसी संपन्न व्यक्ति को शोकाकुल और अश्रुपूर्ण नेत्रों से देखा। धनश्रेष्ठी के शोक का कारण पूछते हुए संत बसरा ने कहा—"भाई! राबिया ने तुम्हें कुछ कहा है क्या? वह तो कभी किसी से दुर्वचन नहीं कहती। फिर उसके किस व्यवहार ने तुम्हें दु:खी किया है।"

"उनका एक ही व्यवहार मेरे हृदय को ठेस पहुँचाता है"- धन श्रेष्ठि बोला।

"वह कौनसा?"—संत बसरा ने समझा कि शायद यह राबिया का विरोधी है और उनके मिलने वाले लोगों को उसके विरुद्ध भड़काने के लिए यहाँ खड़ा नाटक कर रहा है।

परंतु उनकी यह शंका निर्मूल निकली जब उक्त व्यक्ति ने कहा—"संत राबिया से हमें सदाचार और सन्मार्ग की प्रेरणा मिलती है और उस पर कदम बढ़ाने की शक्ति भी। पर हमें दु:ख केवल इसी बात का है कि वे इस प्रकार का गरीबी का जीवन बिताती हैं। फटे, पैबंद लगे कपड़े, घर में अपर्याप्त अन्न और किसी के द्वारा कुछ प्रतिग्रह दिया भी जाए तो वे उसे स्वीकार नहीं करतीं। उनका यही व्यवहार मुझे दु:खी बनाता है। भगवान न करे, इस अभावग्रस्त जिंदगी में उनका शरीर उठ जाए। कहीं ऐसा हो गया तो हमारा नगर श्रीहीन हो जाएगा।"

धनी व्यक्ति ने अपने पास स्वर्ण मुद्रा की वह थैली भी बतायी जो वह राबिया को भेंट करने के लिए लाया था। अत: वे उस व्यक्ति को साथ लेकर राबिया के पास गए और उसका समर्थन करते हुए

कहने लगे—"प्यारी बहन! तुम इसे स्वीकार कर लो। यदि शरीर रहा तभी तो परमात्मा की प्रीति और सत्य की शोध हो सकेगी।"

"भाई! जो लोग दिन-रात दुष्कर्मों में लिप्त रहते हैं भगवान उनका भी भरण-पोषण करता है"-राबिया ने कहा—"तो फिर परमात्मा मुझे कैसे भूल सकता है। लंबे समय तक उसके मार्ग में चलते हुए मैंने पाया है कि उसका संरक्षण प्राप्त करने के लिए प्रत्येक साधक को किसी भी आश्रय का, संरक्षण का सहारा नहीं लेना चाहिए।"

"भगवान मेरी जरूरतें किसी भी प्रकार पूरी कर देता है। भले ही आप लोगों को मेरी कुटिया में दैन्य-दारिद्र्य दिखता हो परंतु मैं इसी में प्रभु कृपा का अनुभव करती हूँ"-राबिया के इस उत्तर से संत बसरा बड़े खुश हुए और श्रद्धानत भी।

एक बार की ही और घटना है। राबिया का स्वास्थ्य जरा खराब हो गया। वही महानुभाव उनकी परिचर्या और चिकित्सा व्यवस्था का प्रस्ताव लेकर आए। राबिया ने उन्हें प्रभु के आश्रय पर विश्वास की बात दोहरा दी।

तब उक्त सज्जन ने कहा—"तो फिर प्रभु से ही प्रार्थना क्यों नहीं करतीं? वह आपकी प्रार्थना पर अवश्य ध्यान देगा।"

"वे नहीं जानते क्या कि मैं बीमार हूँ"—राबिया ने चेहरे पर मुस्कान बिखेरते हुए कहा—"जब उनकी जानकारी में है कि मैं बीमार हूँ तो यह भी उनका आग्रह ही है। उनकी इच्छा है कि मेरा शरीर रोग की आग में तपकर पवित्र हो जाए। उनकी आकांक्षा के विपरीत उनसे प्रार्थना करना अशोभन है। उन्हें ठीक करना होगा तब कर देंगे। मैं क्यों उनसे यह अशोभन कार्य करने के लिए कहकर उनके प्रेम को कलंकित करूँ।"

धनश्रेष्ठी यह सुनकर निरुत्तर रह गए और वापस वहाँ से चले आए। निराश होकर नहीं ईश्वर विश्वास और आत्म-संतोष की प्रेरणा और प्रकाश लेकर। 

ईश्वर का ऋण

अमीर मोमिन हज करने पहुँचे। वहाँ उन्होंने ईश्वर के सच्चे सेवक की तलाश की। वैसे वहाँ भगवान के भक्तों की कोई कमी न थी पर वह किसी पहुँचे हुए भक्त की तलाश में थे। मंत्री की सहायता से शहर से दूर एक झोंपड़ी में एक फकीर से भेंट हुई। अमीर मोमिन ने उनके चरणों में अपना माथा टेक दिया। और मंत्री के द्वारा यह जानना चाहा कि इस फकीर पर किसी का कर्ज तो नहीं है यदि किसी प्रकार का कर्ज हो तो उसका भुगतान राज्य कोष से किया जा सकता है।

मंत्री के द्वारा बादशाह को पता चला कि वह एक सेठ का कर्जदार है और उनके आदेश पर उसे कर्ज से मुक्त कर दिया गया। ऐसे कितने ही संत महात्माओं की बादशाह से भेंट हुई जो किसी न किसी के कर्जदार थे। बादशाह के आदेश पर राज्यकोष से उनका कर्ज चुका दिया गया। संत-महात्माओं की ऐसी स्थिति देखकर वह अत्यंत दु:खी हुए और सोचने लगे साधारण गृहस्थ और इन महात्माओं में कोई विशेष अंतर नहीं है।

अब तो किसी पहुँचे हुए फकीर की तलाश होने लगी। मंत्री अपने बादशाह को लेकर शहर से बहुत दूर बाहर पहुँचा, जहाँ घने वन में केवल एक ही कुटिया दिखाई दे रही थी। मंत्री ने द्वार खटखटाया, अंदर से एक प्रश्न भरी आवाज आई—"कौन?"

"आपकी सेवा में अमीर मोमिन बादशाह उपस्थित हुए हैं। कृपया द्वार खोलकर उन्हें दर्शन करने का अवसर प्रदान कीजिए।" —मंत्री ने बड़ी नम्रता के साथ कहा।

"अमीर मोमिन को यहाँ आने की आवश्यकता क्यों पड़ गई? बादशाह से एक फकीर को क्या सरोकार?"

द्वार पर आए हुए किसी अतिथि को खाली हाथ लौटाना ठीक नहीं है। यह सोचकर फकीर ने दरवाजा खोल दिया।

कुटिया में अंदर बैठने के लिए चटाई पड़ी हुई थी। नाममात्र का सामान था। एक ओर आसन पर फकीर बैठा हुआ था। अभिवादन कर दोनों ही पास में बिछी चटाई पर बैठ गए। काफी देर तक दोनो ओर से धार्मिक चरचा होती रही। चलते समय बड़ी हिम्मत करके बादशाह ने पूछा—"क्षमा करें। मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ कि श्रीमानजी पर किसी प्रकार कर्ज तो नहीं है। यदि हो तो राज्यकोष से उसका भुगताना किया जा सकता है।"

"कर्ज"—फकीर ने चौंककर पूछा—"मुझ पर तो इतना कर्ज है कि यदि आपका संपूर्ण कोष खाली कर दिया जाए फिर भी उससे मुक्ति नहीं मिल सकती।"

"फिर भी बताइए तो सही कि आप पर कितना कर्ज है? और किससे लिया? ब्याज की दर क्या थी?"—बादशाह ने बड़े नम्र शब्दों में अपनी बात प्रस्तुत की।

फकीर ने बादशाह के कंधे पर स्नेह से हाथ रखते हुए कहा—"आप सारे संसार का ऋण तो चुका सकते हैं पर ईश्वर का जो मुझ पर ऋण शेष है उसका चुकाना आसान कार्य नहीं है। ईश्वर ने मुझे बनाया और यह आशा की है कि मैं उसकी संतानों की सेवा करूँगा। इंसान की तरह जीऊँगा और दूसरे व्यक्तियों को भी उसी राह पर चलने की प्रेरणा दूँगा पर यह सब मैं कहाँ पर पाया। मेरा अधिकतर जीवन आराम और विलासिता में ही बीत गया। परिवार को छोड़कर जब मैं फकीर हुआ तो ईश्वर की बंदगी करने के बजाय आने वाले लोगों से अपनी बंदगी करवाता रहा, भला मुझ जैसा कृतघ्न व्यक्ति तुम्हें कहीं ढूँढ़े मिलेगा। मैं अपनी गलती पर बहुत शर्मिंदा हूँ और सोचता हूँ बचे हुए इस जीवन का तो सदुपयोग कर ही लूँ। ईश्वर ही अच्छी तरह जानता है कि मैं कितना कर्ज उससे लेकर आया था। यह कहते-कहते फकीर का हृदय भर आया था और बादशाह तथा मंत्री कुटिया से बाहर निकल आए।

आज के युग का ऋषि

सन् १८९८ का एक शीतकालीन प्रभात। पिट्सवर्ग के भौतिक संस्थान के निदेशक के निवास स्थान के सामने एक शानदार कार रुकी। उसमें से एक संभ्रात सा दीखने वाला व्यक्ति उतरा और कालबेल बजाई। थोड़ी देर में दरवाजा खुला। द्वार खोलने वाले बागवान से दीखने वाले आदमी, जिसके साधारण कपड़ों पर जहाँ-तहाँ मिट्टी लगी हुई थी, पैंट और शर्ट के पोंचे मोड़कर ऊपर चढ़ाए हुए थे, से आगंतुक ने पूछा—"श्रीमान निदेशक महोदय हैं।"

"जी हाँ।"

"काम।"

"उनसे कहो ये महाशय आपसे मिलना चाहते हैं।" यह कहते हुए उसने अपना परिचय कार्ड उसे थमा दिया। कार्ड हाथ में लेकर उस बागवान से दीखने वाले आदमी ने पढ़ा और तुरंत बोला—"वे आपसे एक घंटे बाद ही मिल सकेंगे, अभी व्यस्त हैं। आप चाहें तो भीतर चलकर उनकी प्रतीक्षा कर सकते हैं।"

"उनसे पूछ तो लो।"

"पूछ लिया"-उसने वहीं खड़े-खड़े कहा।

आगंतुक ने समझा, किस पागल से पाला पड़ा है। किंतु तुरंत ही उसे ध्यान आया, क्या यही विलियम कोनरेड रॉटजन तो नहीं, जिसने एक्स-रे का आविष्कार किया है। पूछने पर उत्तर मिला—"जी हाँ, अभी में एक घंटे तक अपनी बगीची में काम करता हूँ, उसके बाद बापसे बातचीत हो सकेगी। यदि आपको कोई एतराज न हो, तो ड्राइंग रूम में बैठिए।" "जी बेहतर है"—कहता हुआ एक ड्राइंग रूम की ओर चल पड़ा। ठीक एक घंटे बाद वे अपनी सादी किंतु स्वच्छ, सुरुचिपूर्ण पोशाक पहने आगंतुक के सामने उपस्थित थे। "कहिए, मैं आपकी क्या सेवा

कर सकता हूँ ?'' सेवा तो मैं आपकी करने आया हूँ। आपकी तो कृपा चाहिए। बात यह है कि आपने जो आविष्कार किया है, मैं उसे पेटेंट कराने और एकाधिकार के बारे में बात करने आया हूँ। क्यों न आप हमारे पार्टनर बन जाएँ और हम एक कंपनी खोल दें, जिससे कि आपको अपनी महत्त्वपूर्ण शोध 'रॉटजन रेज' का लाभ मिल जाए। यदि आप चाहें तो हमारी कंपनी को वह अधिकार दे दें। बदले में आप चाहे जो रकम ले लें।''

''देखिए, श्रीमान जी, पहले आप सुधार कीजिए रॉटजन रेज नहीं एक्स-रेज।'' मैं मनुष्य हूँ और मनुष्यता में विश्वास करता हूँ इन किरणों को मैंने नहीं पैदा किया, फिर मैं अपने नाम के साथ क्यों जोड़ूँ। व्यवहार के लिए नाम रखना है, तो रॉटजन के स्थान पर 'एक्स' सही है। ये तो प्रकृति के दिए गए हवा, पानी की तरह पहले से ही धरती पर मौजूद है। इस कारण मैं अपने इस आविष्कार को व्यापार नहीं बनाना चाहता। यह चिकित्सा क्षेत्र में उपयोगी है। इस आविष्कार से मानवता का बहुत भला हो सकता है। मुझे तो आविष्कर्त्ता का श्रेय भी नहीं चाहिए। मैंने अपना कर्त्तव्य निभा लिया यह ही बहुत है।''

व्यापारी ने सोचा, रॉटजन शायद स्पष्ट रूप से जानना चाहते हैं कि उन्हें कितनी रकम मिल सकती है? ''मैं आपको दस लाख डालर दे सकता हूँ, अधिकार बेचने के। इनसे आप अधिक सुविधापूर्वक जीवन जी सकते हैं। स्वयं बागवानी करने की जगह नौकर रख सकते हैं।''

रॉटजन ने आगंतुक की बात सुनकर दृढ़तापूर्वक कहा— ''श्रीमान जी!'' मुझे आलसी और अपंग नहीं बनना है। अब आप दस लाख दें तो क्या और दस करोड़ दें तो क्या? मेरी अपनी कोई चीज हो तो दूँ आपको। जो भी निर्माता चाहे इसका निर्माण करे। आप भी कीजिए। जितनी अधिक एक्स-रे मशीनें बनेंगी, खुली प्रतिद्वंद्विता में बनेंगी, खुले बाजार में बिकेंगी, जनता अधिक लाभ उठाएगी। एकाधिकार के कारण अधिक उत्पादन

होने पर भी वह संस्था उसका मूल्य अधिक रखेगी। नाम, यश, वैभव, संपत्ति की अपेक्षा मेरे लिए मानवता की सेवा अधिक मूल्यवान है। व्यापारी इस आधुनिक ऋषि की निस्पृहता देख सिर झुकाकर चलता बना। 

करुणा के पुजारी का आत्मोत्सर्ग

घटना द्वितीय विश्वयुद्ध की है। नाजी यंत्रणा शिविर से एक कैदी किसी तरह भागने में सफल हो गया। उस यंत्रणा कक्ष में ६०० कैदी बंद थे। शिविर का कमांडर एक खूँखार जर्मन था, जिसकी मुखाकृति ही उसकी कठोरता का परिचय देती थी। सूचना कमांडर तक पहुँची। क्रोधावेश से वह काँपने लगा। उस कैदी के भागने में अन्य कैदियों का ही योगदान हो सकता है, यह सोचकर उसने घोषणा करा दी कि यदि २४ घंटे के भीतर कैदी न पकड़ा गया तो उसके शिविर के अन्य कैदियों में से दस को मौत के घाट उतार दिया जाएगा।

दिल को दहला देने वाली यह खबर थी। सैनिकों के लिए मृत्यु कोई विशेष घटना न थी। पर विशेषता उस विचित्र निर्णय में सन्निहित थी जिसमें अकारण ही निरपराध कैदियों को मृत्युदंड देने की घोषणा की गई थी। दस में किस-किस का नंबर आएगा, यह अनिश्चिता और भी कैदियों को भयभीत कर रही थी। मन ही मन सभी कैदी ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे कि किसी तरह वह भगोड़ा कैदी पकड़ में आ जावे ताकि जान बचे। पर वह पकड़ा न जा सका।

बलि के बकरे की भाँति एक कतार में नाजी सैनिकों के कड़े नियंत्रण में ६०० कैदी खड़े थे। सामने कड़ी नजरों से कमांडर उन्हें घूरे जा रहा था। कुछ ही क्षणों में जीवन-मृत्यु का फैसला होने वाला था। कर्नल की अचानक आवाज गूँजी। उसने सूचना दी कि भगोड़ा कैदी पकड़ा नही जा सका है, अतएव बंदियों में से वह किन्हीं दस

को चुनेगा, जिन्हें काल कोठरी में तड़प-तड़प कर मरने के लिए बंद कर दिया जाएगा।

एक संतरी को साथ लेकर चुनाव के लिए कर्नल ने सामने एक किनारे से दूसरे किनारे की ओर चलना शुरू किया। हर बार वह एक कैदी की ओर इशारा करता जिसे धक्का देकर संतरी कतार से बाहर कर देता। इस तरह दस बार के चक्कर में उसने दस कैदियों को कतार से बाहर कर दिया। चुने हुए कैदी भय के मारे चीखने-चिल्लाने लगे। उनमें से एक कैदी ऐसा भी था जो अन्य नौ की अपेक्षा अधिक ही विलाप कर रहा था। उसके मासूम बच्चे थे जिनकी देखभाल करने वाला अन्य कोई न था। कर्नल से उसने जीवनदान की भीख माँगते हुए याचना की "मेरे ऊपर न सही मेरे मासूम बच्चों पर तो रहम करें।"

रहम खाने के स्थान पर कर्नल का क्रूर अट्टहास गूँजा। भद्दी सी गाली देते हुए उसने कैदी पर एक जोरदार ठोकर मारी, तड़पता हुआ वह एक किनारे पर जा गिरा। कर्नल के अट्टहास के समक्ष उसका करुण क्रंदन दब कर रह गया।

उस बंदी शिविर में एक दुबला-पतला कैदी यह सब दृश्य देख रहा था। संतरी जैसे ही उस कैदी को लेकर जाने लगे, वह आगे बढ़ा और बोला—"ठहरो!" कर्नल ने मुड़कर देखा एक कैदी कतार से आगे बढ़ आया था। निर्भीक आवाज उसी की थी। बिना एक क्षण गँवाए उसने कर्नल से कहा—"आप उस कैदी को छोड़ दें जो जीवनदान की भीख माँग रहा है। बदले में मेरा जीवन ले लें।" किंकर्तव्यविमूढ़ बना कर्नल थोड़ी देर उस कैदी को घूरकर देखता रहा पर थोड़ी ही देर बाद मुस्कराता हुआ बोला—"तुम्हारी शर्त मुझे मंजूर है।" कृशकाय कैदी के चेहरे पर संतोष की आभा चमकने लगी, ऐसा लगा जैसे कोई बड़ी उपलब्धि मिल गई हो। जीवनदान मिले कैदी को उम्मीद भी न थी कि कोई दूसरा व्यक्ति इतना बड़ा बलिदान भी दे सकता है।

उसकी आँसुओं से भरी आँखे उस मसीहा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त कर रही थीं।

नाजियों की नृशंसता के विरुद्ध जीवनपर्यंत लड़ने तथा अंततः अपना उत्सर्ग करने वाले करुणा की साकार प्रतिमूर्ति पादरी कोल्बे का रोमन कैथोलिक चर्च के वेटिकन-रोम सचिवालय में अभिषेक किया गया। उनके महान बलिदान के उपलक्ष्य में अंग्रेजी पत्रिक रीडर-डाइजेस्ट ने एक विशिष्ट लेख प्रकाशित करते हुए भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। 

मानवता की पीर पहचानें

दो तरुण एक वन से निकलते हुए जा रहे थे। पिकनिक मनाने आए इन मित्रों को आज का दिन खूब उल्लासपूर्ण लगा। पक्षियों का कलरव, छोटे-मोटे जंगली जानवरों से युक्त पर हिंस्र जानवरों से प्रायः मुक्त वन-विहार का आनंद भला किसे न रुचेगा। दिनभर हँसने-खेलने, घूमने-दौड़ने के बाद अब तैयारी लौट चलने की थी।

राह चलते हुए गपशप हो रही थी। इसी बीच पहले ने दूसरे की ओर इशारा किया—"देख यार! उस पेड़ पर कितनी चिड़िया हैं।" होने दो! इससे क्या? चिड़िया पेड़ पर न बैठेंगी तो क्या तेरे सिर पर विराजेंगी।" "नहीं भाई! यह बात नहीं है।" पहले ने कहा।

"फिर क्या है?"

"ये सबकी सब कितनी खूबसूरत हैं।"

"सो तो हैं।" मित्र के आग्रह पर उसने नजर उठाते हुए कहा।

इतने में साथी ने गुलेल निकाली। निशाना साधा और एक नुकीला पत्थर पेड़ की ओर फेंक दिया। पहले के निशाना साधते ही दूसरा चिल्लाया—"अरे! यह क्या?" पर तब तक पत्थर गुलेल से बाहर हो चुका था। पेड़ में पत्थर लगते ही सारी चिड़िया उड़ गयीं, पर एक सुंदर नीले पंखों वाली चिड़िया पत्तों के बीच से सरकती-

खरखराती हुई धरती पर गिर पड़ी। दोनों उस ओर भागे, पर मन में विरोधी भावों को लिए। मारने वाले के मन में निष्ठुरता का उन्माद था, नष्ट होता जीवन एक महज खेल था। दूसरा जीवन की यह दुर्गति देख संवेदनशील हो उठा था। पक्षी के पास वह पहले पहुँचा। अधमरे, लहूहुहान हो रहे उस प्राणी को उठाया फिर मित्र की ओर आँखें तरेरते हुए कहा—"हेनरी! तूने यह अच्छा नहीं किया।"

"इसमें बुरा क्या?" सुनने वाला अपने कार्य के अनौचित्य को समझना नहीं चाहता था। मित्र के प्रश्न को अनसुना करते हुए दूसरे ने चिड़िया की ओर देखा, वह अपनी अधमुँदी आँखों से उसकी ओर ताके जा रही थी। धीमी श्वासों के सहारे जैसे कह रही हो। ओ रे इंसान! तुझे दंभ है अपनी उपलब्धियों पर, गर्व है अपनी बौद्धिकता पर, क्या कभी तुझे दूसरों की मुस्कराहट को बकरार रख पाना आएगा? कब आँक पाएगा तू जीवन का मूल्य? प्रत्येक श्वॉस के साथ निस्सृत हो रहे प्रश्न उसे बेधे जा रहे थे। लग रहा था जैसे उसकी एक-एक पसली निकालकर अलग रखी जा रही हो।

वह दौड़ पड़ा पास बह रही नदी की ओर। पहुँचकर चिड़िया की चोंच खोलकर पानी डाला, पंख धोए। वह उसकी ओर आँख पसार कर देख रही थी। जैसे पहचानने की कोशिश कर रही हो, तो तू वह नहीं है। पर क्या अंतर है तुझमें और उसमें? नाक-नक्श, आकार-प्रकार तो एक जैसे। फिर भी अंतर है निष्ठुरता और संवेदना का, ध्वंश और सृजन का, उन्माद और सौम्यता का। किंतु तूने अपने जाति भाइयों को क्यों नहीं पढ़ाया संवेदनशीलता का पाठ? क्यों नहीं बतायी सृजन की गरिमा और सौम्यता का महत्त्व? और अपने सवालों का जबाव लिए बिना वह काया से विरत होकर चल पड़ी किसी अनजाने देश की ओर। तब तक हेनरी भी आ पहुँचा था। उसे अपनी भूल समझ में आ चुकी थी। धीरे से उसने पूछा—"चिड़िया मर गयी।"

"हाँ"-स्वर व्यथापूर्ण था। दोनों कुछ क्षण मौन रहे। फिर पक्षी को बचाने वाले तरुण ने वहीं प्रतिज्ञा की। आज से मेरी समूची

सामर्थ्य निष्ठुरता की चट्टान को फोड़ने और भाव संवेदनाओं के स्रोत को उमगाने में लगेगी और सचमुच उन्होंने अपने कृतित्व के माध्यम से उन अनेक सवालों के जबाव देने प्रारंभ किए। स्वयं के जीवन की हलचलों के माध्यम से इंसानियत का शिक्षण देने वाले यह तरुण थे-डॉ० अलवर्ट श्वाइट्जर। मानव जाति की परिधि में निष्ठुरता से उपजे यह प्रश्न अभी भी अनसुलझे हैं। इन्हें सुलझाने का दायित्व स्वयं हम पर है। विचार करें, कहीं हम दायित्व विमुख या गैर जिम्मेदार तो नहीं हैं।

ईश्वरीय न्याय यों प्रकट होता है

घटना डेढ़ सौ वर्ष पुरानी है। सिडनी (आस्ट्रेलिया) के जोजेफ स्माइल नामक व्यक्ति को फाँसी की सजा दी गई। पुलिस ने उस पर चोरी और हत्या का अभियोग लगाया था। यद्यपि चोरी कुछ हजार रुपयों की ही हुई थी पर एक पुलिस सिपाही ने चोरों का पीछा किया। चोरों में से किसी एक ने उस पर भारी औजार से प्रहार किया फलस्वरूप सिपाही की मृत्यु हो गई। फाँसी का आधार हत्या का यह अभियोग था।

जोजेफ इस्माइल के पास से कुछ चोरी गए सिक्के भी बरामद हुए थे तो भी वह सही अपराधी नहीं था। कहीं से भुनाने में वह सिक्के प्राप्त हो गए थे। उसी के आधार पर उसे पकड़ लिया गया। पुलिस के भय से उसने अपराध भी स्वीकार कर लिया और अंत में उसे फाँसी की सजा दे दी गई।

नियत समय पर फाँसी की व्यवस्था की गई। उसे देखने के लिए सैंकड़ों व्यक्ति एकत्रित हुए। न्यायाधीश ने उपस्थित होकर स्माइल से उसकी आखिरी इच्छा जाननी चाही तो उसने अनिच्छा प्रकट करते हुए केवल इतना ही कहा—"मैं निर्दोष हूँ, मैंने अपराध नहीं किया है फिर भी कानून की दृष्टि में मुझे अपराधी ठहराया गया, मैं उसे सहर्ष स्वीकार करता हूँ। सजा तो मिलनी ही चाहिए

अन्यथा अपराधियों की हिम्मतें बढ़ती हैं इससे लोगों को अपराधों के प्रति भय तो होगा।''

जल्लाद ने फाँसी का फंदा गले में चढ़ाया। जाँच की गई सब ठीक था। रस्सा खिंचा और नीचे का तख्ता हटा लिया गया। एक बार वह लटका और दूसरे क्षण ही रस्सा टूट गया। दर्शक अवाक् रह गए यह क्या हुआ। थोड़ा कष्ट तो हुआ पर जोजेफ ने अपनी आँखें खोल दीं। दर्शक चिल्लाए वह निर्दोष है उसे छोड़ दो।

जल्लाद घबराए। दूसरा रस्सा मँगाया गया। सावधानी से सब जगह की जाँच की गई। प्रावोस्ट मार्शल ने स्वयं इत्मीनान कर लिया पर जैसे ही फाँसी पर उसे लटकाया गया रस्सा पूरे वेग से चक्कर खाने लगा। ऐंठन खुल गई और जोजेफ फिर पहले की ही तरह जमीन पर गिर गया।

भीड़ इस बार भी चिल्लाई पर वह घेरे को तोड़ नहीं सकी। कुछ संभ्रांत व्यक्ति खड़े हुए थे उन्होंने हाथ जोड़कर प्रार्थना की—हे परमेश्वर! यदि जोजेफ स्माइल सचमुच निर्दोष है तो उसकी जीवन रक्षा का भार आप पर है। सैकड़ों आत्माओं ने प्रार्थना दुहराई। स्माइल भी शांत और निश्छल भाव से परमात्मा के इस विचित्र विधान को देख रहा था।

तीसरा रस्सा मंगाया गया। उस पर साढ़े चार सौ पौंड वजन का एक पत्थर बाँधकर लटकाया गया। सब ठीक था। रस्सा बिलकुल नया था। तीन रस्से बटकर उसे मजबूत किया गया था। कोई संदेह शेष न रहा और फाँसी देने का कार्य प्रारंभ हुआ। लोगों के ध्यान अब भी परमात्मा के प्रति न्याय की याचना में लगे थे।

प्रार्थना की शक्ति बड़ी प्रचंड है उससे ही परमात्मा की शक्ति प्रस्फुटित होती है। रस्सा विधिवत लटकाया गया। फंदा गले में डाल दिया गया, इस बार जोजेफ को एक लकड़ी के ड्रम के ऊपर बैठाया गया और जब फंदा गले में पड़ गया तो उस ड्रम को हटा

लिया गया, पर ड्रम हटा ही था कि 'चटाख' की आवाज हुई और विस्मय विस्फारित लोग देखते रह गए कि रस्सा ऐसे टूट गया जैसे वह कोई कच्चे सूत का बना हो।

अब तो मार्शल का भी धैर्य टूट गया। वह स्वयं गवर्नर के पास सारी घटना सुनाने गए। अंत में सजा क्षमा कर दी गई। इस दृश्य का लोगों पर इतना तीव्र असर हुआ कि वहीं पर बैठे सही अपराधी ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और अंत में उसे फाँसी की सजा निर्विघ्न संपन्न हुई।

मुहूर्त से बड़ा है विवेक

बात बहुत पुरानी है। ईरान में शाह अब्बास नामक एक शासक हुए थे। उन्होंने जनहित के कार्यों को बहुत महत्त्व दिया। महत्त्वपूर्ण कार्य तथा सुधारों द्वारा उनने अपने नाम की धाक जमा दी थी। कहते हैं उन्हीं के नाम पर उत्साहपूर्वक शब्द 'शाब्बास' प्रचलित हो गया। जिन विशेषताओं के आधार पर वह श्रेष्ठ कार्यों के संपादन तथा व्यापक कीर्ति के अर्जन में समर्थ हुए उन पर आंशिक प्रकाश उनके जीवन की प्रस्तुत घटना से भी पड़ता है।

शाह अब्बास ने स्थान-स्थान पर सार्वजनिक बगीचों की व्यवस्था कर रखी थी। बड़ी उमंग के साथ, प्रयासपूर्वक वह उनमें उपयोगी वृक्ष लगवाया करते थे। वृक्षों की उपयोगिता तथा रमणीयता के कारण उन्होंने उक्त कार्य को पर्याप्त महत्त्व दे रखा था। राजा लोग शौकिया बगीचे लगवाया करते हैं तथा उनमें किसी के आने-जाने पर कड़ा प्रतिबंध रहता है। किंतु शाह अब्बास जनहित की दृष्टि से उक्त कार्य करते थे। अतः उनके बगीचों की रूपरेखा अन्य प्रकार की होती थी। उन्होंने जनता में भी सहज कर्त्तव्य बुद्धि जाग्रत की थी। उनके कारण हर व्यक्ति अपनी निजी संपत्ति की तरह ही सार्वजनिक बागों की भी सुरक्षा का ध्यान रखता था।

एक बार शाह ने दूर से उपयोगी तथा सुरम्य वृक्षों की पौधें मँगवाई तथा बगीचे में लगाने के लिए रख लिया गया। उस समय ईरान में भी 'मुहूर्त' से कार्य करने की प्रथा थी। कार्य को अधिक से अधिक अच्छी तरह करने के लिए कृत संकल्प शाह अब्बास भी उन पौधों को अच्छे मुहूर्त में लगवाना चाहते थे। अच्छे मुहूर्त में लगाए जाने से पौधों के स्थायी रहने तथा पुष्ट और दीर्घजीवी होने की कल्पना थी। अस्तु उसी प्रतीक्षा में पौधे माली के पास रख दिए गए थे।

एक बार दरबार में ज्योतिषी से राजा ने मूहूर्त देखने को कहा। उन्होंने गणना करके बतलाया कि अभी एक घंटे के अंदर ही अच्छा मुहूर्त है, उसके बाद बहुत दिनों तक शुभ मुहूर्त नहीं मिलेगा। यह सुनकर शाह ने माली को बुलवाया। माली किसी काम से कहीं चला गया था और उसके बारे में किसी को पता नहीं था। सामान्य खोज से वह मिला नहीं तथा अधिक खोज में उक्त मुहूर्त बीत जाने का भय था। शाह स्वयं उठ खड़े हुए तथा अपने सामने उन्होंने मुहूर्त बीतने के पूर्व ही सारे पौधे जहाँ-तहाँ जमा दिए। स्वयं श्रम करके कार्य ठीक समय पर किए जाने के संतोष के साथ राजा अपने महल में चले गए।

उधर सारी कार्यवाही से अनभिज्ञ माली अपने कार्य से लौटकर बगीचे में पहुँचा। उसने सारे पौधे बेतरतीव ढंग से लगे हुए देखे। उसने बड़े प्रयासपूर्वक पौधों को अनुकूल स्थान चुनकर उनके लिए उपयुक्त खादयुक्त गड्ढे बनाए थे। उसके विपरीत भद्दे ढंग से अंट-संट काम हुआ देखकर उसे बहुत निराशा हुई। ऐसा करने वाले पर क्रोध भी आया। वहाँ किसी को न पाकर झुंझलाहट में उसने पुनः सारे पौधे उखाड़ लिए।

किसी व्यक्ति ने उसे ऐसा करते देखा तो तुरंत राजा को सूचना दी—"माली सारे किए कराए को बरबाद किए दे रहा है। शाह समय पर माली की अनुपस्थिति से पहले ही रुष्ट थे पर सामान्य

चूक मानकर उसकी अपेक्षा कर गए थे, अब यह बात सुनकर उन्हें क्रोध आ गया। तुरंत माली को बुलाया गया। आते ही उस पर बरस पड़े—"मूर्ख! तूने इतने अच्छे मुहूर्त में लगाए गए पौधों को उखाड़ डाला। अब बहुत दिनों तक अच्छा मुहूर्त संभव नहीं है।"

माली स्तब्ध रह गया। यदि उसे पता होता कि राजा स्वयं यह पौधे लगवा गए हैं तो वह शायद और कोई मार्ग अपनाता। किंतु अब तो भूल हो ही चुकी थी। उधर से कथित मुहूर्त को लेकर बागवानी कला की उपेक्षा के प्रति रोष भी आ रहा था। वह बोला—"हुजूर आपने स्वयं वृक्ष लगवाए हैं यह जानता तो मैं उखाड़ता नहीं और आपके मुहूर्त के लिए तो क्या कहूँ। धन्य है वह शुभ मुहूर्त जिसमें लगाए गए पौधे कुछ घंटे भी न टिक सके।" माली की बात सुनकर विवेकी राजा हँस पड़े। उनकी समझ में बात आ गई कि मुहूर्त के लिए विज्ञान की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। उन्होंने कहा—"अच्छा भाई! तुम अपने हिसाब से ही सब पौधे अभी लगा दो। सत्य का अनावरण करने वाला यह क्षण सबसे शुभ मुहूर्त है।" शाह ने माली को पारितोषिक भी दिया तथा मुहूर्त की परंपरा के स्थान पर विवेक की परंपरा को बल देने लगे।

संत कन्फ्यूशियस और ज्ञानी बुढ़िया

एक दिन संत कन्फ्यूशियस के पास उनके कुछ शिष्य जाकर बोले—"गुरुदेव! सच्चा-ज्ञानी कौन होता है?"

कन्फ्यूशियस ने कहा—"सब लोग बैठ जाओ, अभी बताते हैं।" यह कहकर उन्होंने शेष दिनचर्या पूरी की और कपड़े पहने। फिर सब शिष्यों को लेकर एक ओर चल पड़े।

सब लोग एक गुफा के अंदर प्रविष्ट हुए। वहाँ एक महात्मा निवास करते थे। जप, तप और चिंतन में अपना समय बिताया करते थे। कन्फ्यूशियस ने उनको प्रणाम किया और एक ओर बैठ गए, फिर शांत होकर पूछा—"भगवन! हम लोग आपके पास

ईश्वर का ज्ञान प्राप्त करने आए हैं, बताइए वह कौन है, क्या है, कहाँ रहता है ?"

महात्मा बिगड़ उठे—"तुम लोग यहाँ मेरी शांति भंग करने क्यों आ गए ? भागो, मेरे भजन में विघ्न पड़ता है।" कन्फ्यूशियस शिष्यों को लेकर बाहर निकल आए। उन्होंने कहा—"एक ज्ञानी तो यह है जिन्होंने संसार से आँखें मूँद ली हैं। संसार में सुख-दुःख की परिस्थितियों से अशांत एकांत में शांति की इच्छा रखने वाले यह संत छोटे दरजे के ज्ञानी हुए।"

और अब वे एक गाँव में पहुँचे, जहाँ एक तेली कोल्हू चला रहा था। बैल की आँखें बँधी थीं, वह अपनी मस्त चाल में उतना दायरा न मालूम कब से नाप रहा था और तेली कोल्हू पर बैठा कोई गीत गुनगुना रहा था।

कन्फ्यूशियस ने कहा—"भाई मैनें सुना है तुम ब्रह्मज्ञानी हो। हमें भी थोड़ा ब्रह्म का उपदेश कीजिए। " तेली ने हँसकर उत्तर दिया—"भाई, यह बैल ही मेरा ब्रह्म, मेरा परमात्मा है। इसकी सेवा मैं करता हूँ, यह मेरी सेवा करता है। बस हम दोनों सुखी हैं। सुख ही ब्रह्म है।"

गुरुदेव बाहर निकले और शिष्यों को संबोधित कर कहा—"मध्यम ज्ञानी प्रबुद्ध गृहस्थ के रूप में यह तेली है, जिसके मन में ज्ञान-प्राप्ति की आकांक्षा है। धीरे-धीरे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है।"

अब वे फिर आगे बढ़े। उन्होंने कहा—"संसार की खुली परिस्थितियों का अध्ययन करने से स्थिति का उतना अच्छा ज्ञान हो सकता है, जितना पुस्तकों के पढ़ने अथवा महात्माओं के प्रवचन से नहीं हो सकता। पुस्तक तो एक व्यक्ति का दृष्टिकोण होती है, प्रवचन एक व्यक्ति की ज्ञान साधना का निष्कर्ष। इसलिए संसार को देखो और यह पता लगाओ कि स्पष्ट स्थिति कहाँ है और भ्रम कहाँ है। जो साफ हो, निर्विकार और सही हो, उसे तुम्हारी बुद्धि

आप स्वीकार करेगी। फिर उसे अपने जीवन में धारण करने से कल्याण हो सकता है।''

इस तरह बातचीत करते हुए वे एक बुढ़िया के दरवाजे पर रुके। कई लड़के बुढ़िया के आस-पास शोरगुल कर रहे थे। बुढ़िया चरखा कात रही थी। बीच-बीच में किसी बच्चे के माँगने पर पानी पिला देती, कभी किसी नटखट बालक को डाँट भी देती। कभी किसी को हँस कर समझाती, फिर बच्चे खेलने लगते तो वह भी अपना चरखा कातने में मग्न हो जाती।

कन्फ्यूशियस जैसे ही वहाँ पहुँचे सब लड़के भाग गए। उन्होंने पूछा—''माताजी! आप कृपा कर यह बताइए क्या आपने ईश्वर देखा है?''

बुढ़िया मुस्कराई बोली—''हाँ-हाँ बेटा! वह अभी यहीं खेल रहा था, आपको देखते ही भाग गया। वह निरर्थक शोरगुल, बच्चों का रूठना, मेरा मनाना, फिर हँसना, फिर विनोद-यही तो ईश्वर था जो तुम्हारे यहाँ आते ही चला गया।''

कन्फ्यूशियस शिष्यों को साथ लेकर घर लौट पड़े। उन्होंने बताया—''निष्काम ज्ञानी के रूप में यह बुढ़िया सच्ची ज्ञानी है, जो ज्ञान का संबंध किसी उपयोग या लाभ से नहीं जोड़ती, उसे उन्मुक्त रखकर स्वयं भी मुक्त भाव का अनुभव करती है।''

एक क्रांतिकारी राजकुमार

सोफी अपनी छोटी सी कुटिया में अपने छोटे-से परिवार, जिसमें वह स्वयं, उसके पति और पुत्री एलेक्जेंड्रा सम्मिलित हैं, उनके लिए खान पका रही है। तभी एक अतिथि महोदय कुटिया में पधारते हैं। पति उठकर अंदर जाते हैं और कहते हैं—''सोफी साग में थोड़ा और पानी मिला देना।'' स्वीकारोक्ति में सोफी का सिर हिल जाता है। पति महोदय बैठकखाने में अभी बैठे ही थे कि अन्य मेहमान आ गए। वे पुनः उठते हैं, रसोईघर में पहुँचते हैं। फिर वही

आग्रह—"सोफी तनिक और पानी डाल देना।" "हाँ" उत्तर के साथ ही पति बैठकखाने की ओर मुड़ गए। यह क्रिया उन्हें छः सात बार दुहरानी पड़ी और ढाई व्यक्तियों के भोजन को सात मित्रों को खिलाना पड़ा।

विकट तंगी की स्थिति में भी मेहमानवाजी का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करने वाले आतिथेय थे-रूस के महान क्रांतिकारी विचारक और सुधारवादी-उदारवादी महामानव प्रिंस पीटर क्रोपाटकिन।

सन् १८९० के एक दिन उनकी इंग्लैंड स्थित कुटिया में उनके तीन मित्र बरनार्ड शा, नैविनसन और ब्रेल्सफोर्ड पधारे। वे कहने लगे—"मित्र! इस तंगी की स्थिति में आप अतिथि सत्कार का झंझट क्यों मोल लेते हो?"

प्रिंस एक बारगी चौंके!

"क्या कहा! अतिथि सत्कार?"

"नहीं मित्र! इसे सत्कार जितना छोटा दरजा मत दो। यह मेरी आत्म-तुष्टि है, आत्म-संतोष है, आत्मा की पुकार है। इसमें न तो दिखावा है, न कोई औपचारिकता। इससे मुझे इतना आनंद मिलता है कि मैं बता नहीं सकता। यह अभिव्यंजना से बाहर की बात है।"

बरनार्ड शा बीच में ही बोल पड़े—"हाँ, भारतीय ऋषियों के बारे में सुना भर था कि उनके द्वार पर कोई भूखा आ जाता तो पहले वे उसे भोजन कराते, फिर स्वयं करते। आज उसी भारतीय संस्कृति का मूर्तिमान रूप आप में देख रहा हूँ। संभवतः ऐसी ही कुछ विशेषताओं के कारण उसे देव संस्कृति की संज्ञा दी गई है।"

"निस्संदेह बंधु! देव संस्कृति वही हो सकती है, जिसमें देव तुल्य लोग बसते हों और इसमें दो मत नहीं कि प्राचीन भारतीय ऋषि मनुष्य शरीर में देवता थे।"

"अच्छा एक बात बताओ प्रिंस" —नैविनसन ने उन्हें टोकते हुए कहा "हमारी बाइबिल कहती है कि भगवान पाँचवें आसमान पर निवास करते हैं। भारतीयों के देवता भी इन्हीं का एक रूप हैं।

फिर भी वे मनुष्यों को देवता किस आधार पर मानते हैं? यह हमारी समझ में आया नहीं?"

क्रोपाटकिन मुस्कराए, बोले—"यह तो बड़ी छोटी-सी बात है। इसे बच्चा भी जानता है कि भगवान अथवा देवता निराकार सता है। वे सद्गुणों, सत्प्रवृत्तियों, उच्च आदर्शों के समुच्चय हैं। फिर जिस व्यक्ति में इनकी जितनी मात्रा संचित होती जाती है, वे देव कोटि की दिशा में प्रवृत्त होने लगते हैं। इसी परंपरा में भारतीय संस्कृति में महापुरुषों को देवता अथवा भगवान के नाम से अभिहित किया जाता है। उसे भगवान के समकक्ष मान लिया जाता है।"

"पर मुझे तो आज के धनपतियों पर तरस आता है"-ब्रेल्सफोर्ड बिफर पड़े—"एक तरफ तो हम प्राचीन भारतीय देव परंपरा का उदात्त उदाहरण देखते हैं और दूसरी ओर आज की दैत्य परंपरा का प्रतिमान सामने पाते हैं। कैसी विडंबना है! कैसा विरोधाभास! प्राचीन और नवीन इन दो संस्कृतियों में।"

बरनार्ड शा अचकचाये—"दैत्य परंपरा?"

"हाँ-हाँ, दैत्य परंपरा! इसे क्रूर दैत्य परंपरा नहीं तो और क्या कहें? जिसमें यदि आतिथेय का वश चले तो वे अतिथि को भी लूटकर उसका कीमा बनाने से भी बाज न आएँ—"ब्रेल्सफोर्ड ने प्रतिवाद किया।"

"ठीक कहते हो दोस्त! आज धन ही भगवान है। हर जगह उसी की पूजा होती है। निर्धनों को तो लोग हिकारत की दृष्टि से देखते हैं। हाय री दुनिया! तू कहाँ से कहाँ पहुँच गयी। आज व्यक्ति ही व्यक्ति की आँखों में चुभने लगा। दोस्त अवसरवादी बन गए। धन के लोभ में सहोदरों की हत्या होने लगी। बहू-बेटियाँ आग की भेंट चढ़ने लगीं। यह क्रूरतम उदाहरण संभवतः इतिहास में सबसे वीभत्स है, जिसमें इंसान धन के पीछे हैवान बना हो। इंसानियत तो अब जैसे मानवी विशेषता रही ही नहीं। दृष्टिगत होती भी है तो यत्र-तत्र, यदा-कदा दुर्लभ दैवी गुण के रूप में ही। तीनों मित्र क्रोपाटकिन को मंत्रमुग्ध हो सुन रहे थे।"

अनायास ही बरनार्ड शा की अभिव्यक्ति निकल पड़ी। "मित्र! यदि आप चाहते तो धनवान ही नहीं, धनकुबेर भी बन सकते थे, क्योंकि कई विधाओं में आपकी गति है। आप बहु भाषाविद् हैं। बीस भाषाओं पर आपका अधिकार है, संगीतज्ञ हैं। गणितज्ञ हैं। वैज्ञानिक, कृषि वैज्ञानिक, साहित्यकार, दार्शनिक क्या क्या नहीं हैं। यदि आप चाहते तो इस बहुमुखी प्रतिभा के माध्यम से अब तक इतना धन इकट्ठा कर लेते कि आपकी सातों पीढ़ियाँ उससे अपना निर्वाह करती रहतीं, पर आपने उनका उपयोग मानव कल्याण के लिए ही करना उचित समझा। ७० वर्ष की आयु में भी फकीरी की जिंदगी, औसत नागरिक स्तर से भी नीचे का निर्वाह आपने अंगीकार किया, क्योंकि मानव की दुर्वस्था के प्रति आपके मन में रह-रह कर टीस उठती रही। आप जैसे व्यक्ति समाज की धरोधर हैं, प्रतिमान हैं, मार्गदर्शक हैं। उदाहरण बन कर दिशाहीन समाज को, विवेकहीन व्यक्ति को वस्तुतः आपने दिशा दी है।" संत क्रोपाटकिन निस्पृह भाव से ये उद्‌गार सुन रहे थे। "मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि इतने वर्षों तक हम धन लोलुप स्वार्थवश गलत रास्ते पर चलते रहे, आपका ही रास्ता ठीक था। सही अर्थों में जीवन का सदुपयोग आपने ही किया। मेरे विचार से आप मार्क्सवाद के समर्थक हैं।" उनके स्वर में दृढ़ता और विश्वास था।

"नहीं-नहीं मैं थोथे मार्क्सवाद का समर्थक नहीं हूँ। मार्क्सवादी स्वयं को साम्यवादी समाज व्यवस्था का सबसे प्रबल पक्षधर और बड़ा संगठन मानते हैं, किंतु यदि इस समाज-व्यवस्था का डिसेक्शन करके देखें तो पाएँगे कि इन्हें अपनी प्रणाली की सबसे अधिक चिंता है। मनुष्य तो उसका एक गौण अंश भर है और महत्त्वहीन भी। सिद्धांत संबंधी विचार-भिन्न होने पर वे उसके शरीर और आत्मा को पृथक-पृथक कर देने में भी तनिक संकोच नहीं करते, जबकि हम एनार्किस्टों के लिए मनष्य सबसे प्रधान है। हम सबसे पहले मनुष्य की चिंता करते हैं। "

ब्रेल्सफोर्ड चौंके! "अराजकतावादी-एनार्किस्ट?"-उन्होंने मन ही मन दुहराया।

"प्रिंस! यदि बुरा न मानो, तो एक बात कहूँ।"

"हाँ-हाँ, निःसंकोच!"

"तो सुनो, आपके विचारों में अंतर्विरोध है। एक तरफ आप आध्यात्मिक साम्यवाद, वास्तविक एकता-समता की बात करते हैं और दूसरी ओर स्वयं को अराजकतावादी कहते हैं। तनिक विचार तो कीजिए। क्या यह विरोधाभास नहीं है।"

क्रोपाटकिन मुस्कराए। उन्होंने कहा—"वैसे आपका कहना अपने स्थान पर सही है, पर थोड़ी गहराई में उतरेंगे तो भाव स्पष्ट हो जाएगा। हम अराजकतावादी शब्द का प्रयोग जिन अर्थों में करते हैं, उसका भाव अराजकता के प्रति संघर्ष है, मुहिम खड़ी करना है, न कि समाज में अराजकता फैलाना और उथल-पुथल करना है। हम अन्याय, शोषण, उत्पीड़न के प्रबल विरोधी हैं, न कि इनके पृष्ठ पोषक। हमारे साध्य और साधन दोनों पवित्र हैं। हम गलत तरीके से अच्छे लक्ष्य की प्राप्ति का उतना ही विरोध करते हैं, जितना अच्छे तरीके से गलत-गलत लक्ष्य की प्राप्ति का। हमारी समाज व्यवस्था में मार्ग और लक्ष्य दोनों पवित्र हैं। हम व्यक्ति को सुखी देखना चाहते हैं, पर दूसरे का सुख छीनकर नहीं, उसका शोषण-उत्पीड़न जहाँ होगा, वहाँ हम उसका प्रतिरोध करेंगे, संघर्ष करेंगे, क्रांति करेंगे। हमारा अराजकतावाद इन्हीं अर्थों में है। इसी कारण हम स्वयं को अराजकतावादी कहते हैं।"

मित्र का समाधान हो चुका था। उसके चेहरे पर संतोष की झलक थी और क्रोपाटकिन के प्रति श्रद्धा के भाव। धुँधलका घिर आया था। सोफी ने आंगतुकों को भोजन कराया और फिर सभी विदा हुए। सब गद्‌गद् भाव से मन ही मन क्रोपाटकिन की सराहना कर रहे थे, जिसने निस्पृह अपरिग्रही की तरह अपना सारा जीवन-समाज को समर्पित कर दिया। 

जिम्मेदारी समझी और मौत से जूझ गए

प्रस्तुत घटना २८ वर्षीय एक ऐसे दुस्साहसी जर्मन की है, जिसने अपनी जान जोखिम में डालकर भी धन-जन की क्षति को टाला और अद्‌भुत प्रत्युत्पन्नमति का परिचय दिया।

हान्स ह्यूगर एक टैंकर ड्राइवर था और प्राय: दक्षिण-पश्चिम जर्मनी के एक छोटे शहर टेनिनजेन से स्यूलिन एल्युमिनियम फैक्ट्री में ऐसीटोन लाया करता था। वह अपने इस कार्य में इतना दक्ष हो चुका था कि उसे इस काम में कोई डर भय का एहसास नहीं होता और इसे भी अपना रूटीन-कार्य मानता था।

सितंबर १९६८ के एक दिन भी उसने छ: हजार गैलन एसीटोन युक्त ३५ फुट लंबे विशाल टैंकर को लेकर गंतव्य के लिए प्रयाण किया। रास्ते में किसी प्रकार का कोई अशुभ नहीं घटा। स्यूलिन पहुँचकर उसने टैंकरों को खाली करना आरंभ किया। एक घंटे के भीतर टैंकर ह्यूगर ने सुरक्षित खाली कर लिए। छठवें टैंकर का एसीटोन जब वह भूमिगत स्टोरेज टैंक में डाल रहा था, तभी अचानक न जाने कैसे उस टैंकर में आग लग गई और उससे पाँच फुट लंबी ज्वाला निकलने लगी। इस समय तक छ: बज चुके थे। फैक्ट्री की दिवा पाली समाप्त हो चुकी थी। लोग अपनी ड्यूटी पूरी कर बाहर आ रहे थे और नयी पाली के कर्मचारी अंदर प्रवेश कर रहे थे। बाहर इनका भारी जमघट था।

ह्यूगर ने सोचा कि यदि आग होज पाइप के माध्यम से किसी प्रकार स्टोरेज टैंक में पहुँच गई तो क्षण में ही पूरी फैक्ट्री और कर्मचारी राख के ढेर में बदल जाएँगे। फैक्ट्री के पास-पड़ोस के गाँवों को जो हानि उठानी पड़ेगी सो अलग। ज्ञातव्य है कि एसीटोन एक कार्बनिक यौगिक है जो भारी ज्वलनशील होता है। अस्तु उसने निर्णय लिया कि इस भयंकर दुर्घटना को वह घटित नहीं होने देगा और अपना प्राणोत्सर्ग करके भी हजारों जानों की रक्षा करेगा। यह सब विचार क्षण मात्र में ही

ह्यूगर के दिमाग में कौंध गए। एक पल की भी देरी करना, उसने दुर्घटना को आमंत्रण करने जैसा समझा। अतः तत्क्षण इस दिशा में क्रियाशील हो गया। धधकती लपटों में उसने हाथ डाला और स्टोरेज टैंक का बाल्व बंद कर दिया, तत्पश्चात उससे जुड़े होज पाइप को पृथक किया। होज पाइप के खुलते ही आग का एक फब्बारा छूटा और देखते देखते टैंकर के पिछले भाग को बुरी तरह अपने गिरफ्त में ले लिया। ह्यूगर ने अविलंब ट्रक चालू की और धधकते टैंकर को किसी निर्जन सुरक्षित स्थान में छोड़ देने के लिए चल पड़ा। डेढ़ घंटे पहले वह जिस रास्ते से आया था उसी से लौट रहा था, किंतु वह इस बात से आश्वस्त था कि उसने शहर का पुल पार कर लिया था, क्योंकि उसके बाद शहर की जनसंख्या विरल होती चली गयी थी, मगर दूसरे ही क्षण उसकी नजर टैंकर के पिछले हिस्से पर पड़ी तो वह गहरे शोक में डूब गया। लपटें निरंतर बढ़ती ही जा रही थीं और अब उसने दस फुट की ऊँचाई प्राप्त कर ली थी।

ह्यूगर ने ट्रक की गति बढ़ा दी। गति बढ़ते ही ज्वाला नीची और चपटी हो गई। दमकल के आने के तक किसी संभावित दुर्घटना से बचने के लिए उसने गति तेज रखना ही उचित समझा क्योंकि अभी उसे लगातार बढ़ना था। अब तक उसे कोई ऐसा उपयुक्त स्थान मिल नहीं पाया था जहाँ वह ट्रक को छोड़ सके। पास-पड़ोस के क्षेत्र की आबादी अभी भी घनी थी।

कुछ आगे बढ़ा तो एक रेल रोड क्रासिंग था जहाँ से एक ट्रक गुजर रहा था। ह्यूगर का टैंकर उसके पिछले डिब्बे से टकराते-टकराते बचा।

कुछ और आगे बढ़ा तो शाम की भीड़ से यातायात पूरा जाम था। उसे अब प्रत्यक्ष मौत सामने दिखाई पड़ने लगी, क्योंकि क्षणभर के लिए रुकने से आग कैबिन में पहुँचे सकती थी। मगर वह लाचार था। अब निकलने के सारे रास्ते बंद थे। रोड के एक ओर गहरी खाई थी, तो दूसरी ओर भीड़-भाड़ युक्त शहर। जाए तो किधर। इस वक्त उसे

अपनी जान से अधिक प्यारी और कीमती सैकड़ों निरीह लोगों की जानें लग रही थीं। चिंता इसी बात की सता रही थी कि वह इस भयंकर अग्निकांड से धन-जन की रक्षा कैसे करे, किंतु इस समय ह्यूगर मजबूर था। विवशता में गाड़ी रोकनी पड़ी। गाड़ी रुकते ही ज्वाला दुर्धर्ष बनी और हयूगर को निगलने की हर चंद कोशिश करने लगी, पर ह्यूगर अपने दीमक का सा धैर्य का परिचय देता रहा। इस बीच वह लगातार हॉर्न बजाता रहा। अल्प विराम के बाद मैदानी भाग की ओर जैसे ही भीड़ कुछ छटी, उसने उसी ओर ट्रक दौड़ा दी। गाड़ी मैदानी भाग से होते हुए शहर से दूर देहात की ओर भागने लगी। ह्यूगर अभी भी अपने इस निश्चय पर दृढ़ था कि भले ही इस भाग-दौड़ में उसे अपने प्राणों की आहुति देनी पड़े, मगर जनहानि को वह हर हालत में रोकेगा। और इसी लक्ष्य पूर्ति के लिए वह अपनी गाड़ी सड़क पर किसी जनहीन स्थान की तलाश में भगाए जा रहा था तथा भगवान से लगातार प्रार्थना करता जा रहा था कि उसके मार्ग में किसी प्रकार का अवरोध न आए। ट्रक निरंतर दौड़ती जा रही थी, परंतु ह्यूगर को सड़क के किसी ओर कोई ऐसा स्थान नहीं मिल पा रहा था, जहाँ से वह निकल कर किसी मैदानी गाँव में प्रवेश कर सके। रोड के दोनों ओर गहरे खड्ढ थे, ऐसी स्थिति में संतुलन का जरा भी बिगड़ना ह्यूगर के लिए मौत का बुलावा हो सकता था। इसी बीच बारिश शुरू हो गई। इससे अग्नि शांत तो हुई नहीं, उल्टे सड़क फिसलनयुक्त हो गई। इससे ह्यूगर की परेशानी और बढ़ गई। हल्का ब्रेक भी उसकी जान खतरे में डाल सकता था। मगर इसकी परवाह किए बिना वह लगातार ब्रढ़ता ही जा रहा था। अभी भी कोई उपयुक्त स्थान उसे मिल नहीं पाया था।

अब वह एक ऐसे स्थान से गुजर रहा था जहाँ ट्रेफिक बहुत बिरल था, मगर दुर्भाग्य था कि यहाँ भी उसके पीछे कारों की एक टुकड़ी भागी चली आ रही थी मानों पुच्छल तारों की पूँछनुमा ह्यूगर के ट्रक से वे सम्मोहित हो खिंचे चले आ रहे हों; इस स्थिति

में ट्रक को रोकना अथवा गति कम करना कारों के लिए खतरनाक हो सकता था, अतः वह गाड़ी दौड़ाता ही रहा। १२ मील तक वह उसी गति से बढ़ता रहा तब जाकर उन कारों से पीछा छूटा।

अब तक उसका दाहिना हाथ स्टियरिंग ह्वील को पकड़े-पकड़े अकड़ चुका था, बाएँ हाथ की अँगुलियाँ हॉर्न दबाते-दबाते सुन्न पड़ चुकी थीं, आगे काम करने से सारे अंग-अवयव इंकार कर रहे थे। पसीने से वह तर-बतर हुआ जा रहा था। उम्मीदें समाप्त हो गई थीं, वह निराश हो चला था कि तभी उसे अपनी गाड़ी के दर्पण में नीली रोशनी खुलती-बुझती दिखाई पड़ी। दो फायर इंजिन उसके पीछे भागे चले आ रहे थे। ह्यूगर को कुछ आशा बँधी। दमकलों के इशारे पर उसने गति कम कर दी। एक दमकल ने आगे बढ़कर गाड़ी रोक दी, फलतः ह्यूगर को भी ब्रेक लगाना पड़ा। एक झटके से गाड़ी रुकी। वह नीचे कूदा और "चिल्लाता हुआ भागा। दमकल सावधान हो गए। उनने अग्नि शामक पाउडर और हजारों गैलन पानी की सहायता से बीस मिनट के कठिन संघर्ष के उपरांत उस पर काबू पाया। आग बुझ चुकी थी और रक्त तप्त टैंकर ठंडा हो गया था।

ह्यूगर इस अग्नि परीक्षा में सफल रहा, किंतु डेढ़ घंटे के इस जीवन-मौत के झूले में झूलते हुए उसकी सारी शक्ति चुक थी। वह पूरी तरह बेहोश हो गया था। तत्काल उसे अस्पताल ले जाया गया, जहाँ कुछ दिनों के उपचार के बाद ही वह स्वस्थ हो सका।

हिम्मत इंसान की, मदद भगवान की

सन् १९३९ में रूस के मुखिया स्टालिन थे। फिनलैंड के कई बंदरगाह रूस के लिए सामरिक महत्त्व के थे इसलिए उन्होंने अपनी शक्ति के बल पर फिनलैंड को धमकी दी—"यह बंदरगाह रूस को दे दिए जाएँ? यदि फिनलैंड ने बात न मानी तो रूस शक्ति प्रयोग करना भी जानता है।"

यह वैसा ही अपराध था जैसे चोरी, डकैती, अपहरण या लूट-पाट। यदि संसार में शक्ति और सैन्य बल ही सब कुछ हो तो

फिर न्याय, नीति आदि सद्भावनाओं को प्रश्रय कहाँ मिले? पर किया क्या जाए, ऐसे भी लोग इस दुनिया में हैं जो केवल शक्ति और उद्दंडता की ही भाषा समझते हैं। इनसे स्वयं की रक्षा हिम्मत से ही करनी पड़ती है। स्वल्प क्षमता के लोग साहसपूर्वक संघर्ष कर बैठते हैं तो उनकी मदद भगवान करता है। बाहर से दिखाई देने वाला राक्षसी बल केवल तब जीतता है जब अच्छाई की शक्तियाँ भले ही सीमित सही संघर्ष करने से भय खा जाती हैं।

फिनलैंड की कुल २ लाख सेना रूस की ४० लाख की विशाल सेना और आधुनिक शस्त्र-सज्जा के सामने जा डटीं। रूसियों को अनुमान था प्रातः होते देर है फिनलैंड निवासियों को जीतना देर नहीं पर उनकी यह आशा मँहगी पड़ी।

एक स्थान पर फिनलैंड के एक सेनाधिकारी लेफ्टिनेंट हीन सारेला को नियुक्त किया गया था। साथ में कुल ४९ सिपाही थे। हथियार भी उस समय के जब बंदूकें बनना प्रारंभ हुई थीं। रात से ही रूसी टैंकों की गड़गड़ाहट सुनाई देने लगी। रूसी सेना मार्च करती हुई बढ़ी चली आ रही थी।

४९ सैनिकों के आगे हजारों की सेना। सैनिकों ने हाथ ढीले कर दिए और कहा—"सर! हाथी और मेमने का, भेड़िए और भेड़ का युद्ध नहीं होता। लड़ाना है तो हमें आप ही मार डालिए। युद्ध के मोर्चे पर आगे बढ़ना तो एक प्रकार से जान-बूझकर हमारी हत्या कराना है।"

लेफ्टिनेंट सारेला का माथा ठनक गया। यह बात उसके अपने मन में आई होती तो वह गोली मार लेता। उसने कड़क कर कहा—"सैनिको! यह मत भूलो कि संसार में वही जातियाँ जीवित रहती हैं जो संघर्ष से नहीं घबड़ातीं। जो बाह्य-आक्रमण का मुकाबला नहीं कर सकते वह अपने सामाजिक जीवन में दृढ़ नहीं हो सकते। प्रतिरोध से घबड़ाने वाले लोगों में अपने से ही उद्दंड और अभद्र लोग पैदा हो जाते हैं और सामाजिक शांति एवं व्यवस्था को चौपट कर डालते हैं। पाप, दुर्भाव, उद्दंडता और उच्छृंखलता मुर्दा जातियों के जीवन में पायी जाती हैं। साहसी शूरवीरों के

राज्य में चोर, उठाईगीर क्या डकैत, आततायी लोग भी मजदूरी करते हैं, उनमें अंधविश्वास और रूढ़िवादिता नहीं पौरुष और पराक्रम का विकास होता है। इसलिए वे थोड़े से भी हों तो भी संसार में छाए रहते हैं। निश्चय करो तुम्हें पराधीनता का दलित जीवन जीना है या फिर शानदार जीवन की प्राप्ति के लिए संघर्ष की तैयारी करनी है।"

सैनिकों के हृदयों में सारेला का तेजस्वी भाषण सुनकर विद्युत कौंध गई। हथियार उठाकर उन्होंने प्रतिज्ञा की—"लड़ेंगे और रक्त की अंतिम बूँद तक संघर्ष करेंगे।"

मुट्ठीभर जवान विकराल दानवी सेना से जूझ पड़े। ४९ जवान दिन भर कुछ खाए पिए बिना जमीन में रेंगते शत्रुओं को मारते हुए आगे बढ़ते गए और जब उस दिन का युद्ध समाप्त हुआ तो संसार के अखबारों ने बड़े-बड़े अक्षरों में छापा—"मुट्ठीभर फिनलैंड के सिपाहियों ने रूसी सेना की अग्रिम पंक्ति के बीस हजार सैनिकों को कुचलकर रख दिया।" ५० गाड़ियों और १२० टैंकों को भी उन्होंने ध्वस्त करके रख दिया था।

सच है जिंदा दिल कौमें बुराइयों और अपराधों के आगे घुटने नहीं टेकतीं, उनसे लड़ पड़ती हैं और विजय पाती हैं। हिम्मत करने वाले इंसान की मदद भगवान भी करता है। स्टालिन जैसे सशक्त व्यक्ति ने भी इस पराजय को चमत्कार ही माना था।

तुम किसी को मारोगे नहीं

बाइबिल में कहा है—"दाऊ शैल्ट नॉट किल!" तुम किसी को मारोगे नहीं। किसी की हत्या नहीं करोगे।

अलबर्ट श्वाइजर बचपन से ही पिता के मुख से यह उपदेश सुना करता था। एक दिन अपने गाँव में उसने देखा कि लोग एक बूढ़े घोड़े को घसीटते हुए कसाई खाने ले जा रहे हैं।

वह चल नहीं पाता, तो पीछे से उस पर चाबुक पड़ रहा है।

छोटे-से बच्चे की आँखों में हफ्तों यह तसवीर नाचती रही।

वह सोचता कि हम अपने घर में रोज प्रार्थना करते हैं, तो सिर्फ आदमियों के बारे में ही क्यों करते हैं? माँ जब रात को सोने के पहले उसे चूमकर 'गुड नाइट' (नमस्ते) करती और मोमबत्ती बुझा देती, तो वह प्रार्थना में अपनी तरफ से एक कड़ी जोड़ देता—

"हे स्वर्ग में रहने वाले परमपिता! तू उन सब पर अपना आशीर्वाद बरसा, जो प्राणधारी हैं, जो साँस लेते हैं। उन्हें बुराइयों से बचा और ऐसा कर, जिससे वे शांति की नींद सो सकें।"

एक दिन अलबर्ट के साथी हेनरी ब्राश ने आकर उसे पुकारा— "श्वाइजर, ओ! श्वाइजर।"

वह दौड़कर बाहर आया तो हेनरी बोला—"देख श्वाइजर, यह क्या है?"

हेनरी बोला—"मैंने ही बनाई है यह। तू भी बनाएगा क्या?"

अलबर्ट का भी जी ललचाया। रबड़ की एक पट्टी हेनरी के पास और थी। दोनों ने इधर-उधर तलाश कर एक लकड़ी खोज निकाली।

अलबर्ट उसमें पत्थर भरकर इधर-उधर फेंकने लगा। हेनरी बोला—"चल श्वाइजर, हम लोग ऊपर चलें पहाड़ी पर गुलेल से कुछ मजा करें। चिड़ियों पर गुलेल चलाएँ।"

अलबर्ट का जी भीतर से उदास हो गया, पर उसे लगा कि अगर वह हेनरी का साथ नहीं देगा तो स्कूल में वह तो उसका मजाक उड़ाएगा ही, दूसरे लड़के भी उसका मजाक उड़ाएगें।

पहाड़ी पर पहुँचकर देखा कि पेड़ों पर पीले-पीले परों और लाल-लाल चोटी वाली चिड़िया बड़े मजे में फुदक रही हैं।

हेनरी बहुत खुश हुआ। उसने अपनी गुलेल में पत्थर भरा। अलबर्ट से कहा—"तू भी भर। कैसा बढ़िया शिकार आज हाथ लगा।"

अलबर्ट पत्थर ढूँढ़ ही रहा था कि नीचे गिरिजाघर में घंटी बजने लगी और तभी उसके कान में मानों बाइबिल का आदेश गूँज उठा—"तुम किसी को मारोगे नहीं।"

अलबर्ट जोर से चिल्ला पड़ा और उसने ताली बजा दी। चिड़िया फुर्र-फुर्र करके आकाश में उड़ गईं। हेनरी के सारे निशाने खाली गए। अपने इस व्यवहार की सफाई देने के लिए अलबर्ट रुका नहीं। बिना कुछ कहे-सुने वह पहाड़ी से उतर कर घर भाग आया।

उसने तय कर लिया कि अब मैं इसकी कतई परवाह न करूँगा कि लोग क्या कहते हैं। अब मैं अपनी साथियों के ऐसे किसी खेल में शामिल न होऊँगा, जिसमें किसी भी प्राणी की जान जाती हो या किसी को तकलीफ होती हो। आगे से मैं न तो मछलीमारों का साथ दूँगा, न चिड़ियामारों का। कुत्तों, बिल्लियों, मेढ़कों, चिड़िया आदि किसी को भी कभी न मारूँगा।"

"तुम किसी को मारोगे नहीं!"—बाइबिल का यह आदेश अलबर्ट श्वाइजर के जीवन का मंत्र बन गया।

कैसा अच्छा मंत्र! 

परिस्थितियाँ, जो निर्बल को भी साहसी बना देती हैं

कठिनाइयाँ और प्रतिकूल परिस्थितियाँ आती हैं तो उनके साथ व्यक्ति में एक ऐसी व्यग्रता, उत्कंठा और साहस का भी आनायास प्रादुर्भाव होता है-जो उसे सहज ही उन परिस्थितियों से उबार लेता है। प्रकृति की सुरक्षा प्रेरणा मनुष्य में ही नहीं अन्य प्राणियों, पशु-पक्षियों और निर्बल कीड़े-मकोड़ों तक में पाई जाती है। ऐसी कई घटनाएँ जानने में आयी हैं, जब इस प्रकृतिदत्त प्रेरणा प्रवाह से असहाय, अशक्त और कुछ न कर सकने की स्थिति में भी जानवरों ने चौंका देने वाला संघर्ष किया और उन्हें परास्त किया।

टेक्सास (अमेरिका) के प्राणीशास्त्र विशेषज्ञ एच० सी० हान ने एक ऐसी ही घटना का उल्लेख एक निबंध में किया था। किसी

दिन वे जीव-जंतुओं की विभिन्न प्रवृत्तियों का अध्ययन करने के लिए टेक्सास के निकटवर्ती जंगलों में गए हुए थे। एक झाड़ी के पास उन्होंने चूहों की चीख और सरसराहट सुनी। दौड़कर वे उस स्थान पर पहुँचे तो देखा कि पाँच फुट लंबे एक साँप के मुँह में दबा हुआ चूहा मुक्त होने का प्रयत्न कर रहा है। वह छटपटाते हुए चीख भी रहा था। तभी एक दूसरा चूहा, पास के बिल से निकला और साँप पर हमला करने लगा। वह कभी उसकी दुम काटता, कभी पीठ। साँप की देह पर जगह-जगह काटते-काटते चूहे ने आखिर उसकी दुम पकड़ ली और मुँह में दबाने लगा। साँप ने कई पलटे खाए, फुफकार मारी मगर सब व्यर्थ। अंत में साँप ने घबड़ा कर आक्रमणकारी चूहे का सामना करने के लिए मुँह में दबे हुए चूहे को छोड़ दिया। जैसे ही वह चूहा मुक्त हुआ और साँप पीछे मुड़ा-दोनों बड़ी तेजी से भाग कर बिल में घुस गए। निर्बल कहे जाने वाले प्राणी भी अपने परिवार के संकटग्रस्त साथियों को देखकर उत्तेजित हो उठते हैं। ऐसे अवसरों पर वे बड़े साहस से काम लेते हैं। तब उनसे कई गुना शक्तिशाली पशु को भी उनके सामने घुटने टेक देना पड़ते हैं।

बंबई की नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी की ओर से प्रकाशित एक पत्रिका में काटन फ्रोजर ने एक और ऐसी ही घटना का वर्णन किया था। उन्होंने एक बार देखा कि एक बड़े पीपल के वृक्ष पर ऊँची शाखाओं से लिपटे हुए एक साँप पर पाँच-छः तोतों ने आक्रमण किया। शायद उस साँप ने किसी तोते को अपना आहार बना लिया था। भिन्न-भिन्न दिशाओं से तोतों ने प्रहार करना आरंभ किया। वे अपनी पैनी चोंचों से साँप पर हमला करते और उड़ जाते। बेचारा साँप तिलमिला कर रह जाता। कुछ समय बाद तोतों ने युद्ध रचना बदली और साँप पर तीव्र आक्रमण किया। एक तोते ने उसे बीच से दबोच कर खींच लिया। इतने में ही साँप की दुम डाल से छूट गयी और वह नीचे पथरीली जमीन पर बड़ी जोर से गिरा। घायल तो वह

पहले ही हो चुका था, जमीन पर गिरते ही उसके प्राण पखेरू उड़ गए। उत्पीड़न और प्रतिशोध के लिए भी कई बार निर्बल पशु-पक्षी आश्चर्यजनक रूप से साहसी बन जाते हैं।

खरगोश यों तो बड़ा डरपोक और भीरु पशु होता है। परंतु मादा खरगोश अपने बच्चों पर किसी प्रकार संकट आते देखकर बड़ी खूँखार होती देखी गयी है। नयी दिल्ली से प्रकाशित होने वाले 'रवि भारत' साप्ताहिक में एक बार ऐसी ही घटना का विवरण छपा था। किसी शिकारी कुत्ते ने आसन्न प्रसूता मादा खरगोश के बच्चों को पकड़ने के लिए उन पर आक्रमण किया। उन बच्चों की माँ वहीं उपस्थित थी। नवजात शिशुओं पर संकट आया देख उसने शिकारी कुत्तों के मुँह पर अपनी पिछली टाँगों से इतना करारा प्रहार किया कि बेचारे कुत्ते भागते ही बने।

इसी प्रकार एक बार मौका पाकर एक लोमड़ी ने बतख के बच्चों को धर दबोचा। बच्चे बुरी तरह चीखने लगे। उनकी चीख-कराह सुनकर पास से ही बच्चों की माँ दौड़ी आयी और अपनी चोंच से लोमड़ी को नोंचने लगी। उसके अंग-प्रत्यंग आक्रमणकारी लोमड़ी का सामना कर रहे थे। पंख लोमड़ी के मुँह पर तमाचे जड़ रहे थे, पंजे उसके शरीर पर चोट पहुँचा रहे थे। घबरा कर लोमड़ी ने बच्चों को छोड़ दिया। किसी सुरक्षित स्थान पर अपने बच्चों को ले जाने की बजाय बतख अब भी लोमड़ी पर ही प्रहार करती रही। अभी भी उसका क्रोध शांत नहीं हुआ था। इस अप्रत्याशित आक्रमण का मुकाबला करने की हिम्मत लोमड़ी में कहाँ से आती। उसे दुम दबाकर भागना ही पड़ा।

संकटग्रस्त अवस्था में खूँखार आक्रमणकारी पशुओं का सामना करने का बल निरीह और अल्प शक्ति वाले जानवरों में न जाने कहाँ से आ जाता है। आगरा (उ० प्र०) के निवासी कृषक की आँखों देखी घटना का विवरण पत्रिकाओं में छपा था। उक्त कृषक की कुछ गायें जंगल में चर रही थी तभी पास की झाड़ी से एक

चीता निकला और गाय पर हमला बोल दिया। चीते की गंध पहचान कर ही गाय ने जोर से हुंकार भरी और उसका आक्रमण होने के पूर्व ही चीते पर प्रत्याक्रमण कर दिया। हुंकार सुनकर पास में ही चर रही एक गाय चुपचाप चीते के पीछे पहुँची और उसकी पीठ पर इतनी जोर से सींग का प्रहार कर उछाला कि चीता चारों खाने चित्त गिरा। संभल कर उठने से पूर्व पहले वाली गाय ने हमला किया और अपने सींग उसके पेट में घुसेड़ दिए।

मात्र बाहरी आक्रमण या अन्य पशु-पक्षियों द्वारा उत्पन्न की गयी घातक परिस्थिति ही नहीं प्राकृतिक और अन्य आपदाएँ भी इनमें अद्‌भुत शौर्य, साहस पैदा कर देती हैं। वे प्राणी जो आग और पानी के पास भी जाने से डरते हैं, तीव्र लपटों और भयंकर बाढ़ों को पार करते देखे गए हैं। मद्रास के एक सरकस की घटना है। असावधानी के कारण सरकस के तंबू में आग लग गयी। तीव्र लपटों और भीषण शोलों से स्वयं को बचाने में सब भाग-दौड़ करने लगे। दर्शक और सरकस के कर्मचारी अपने स्वजन बांधवों और संपत्ति साधनों की चिंता छोड़कर भागने लगे। ऐसी दशा में निरीह पशु-प्राणियों की किसे चिंता होती ? बेचारे जानवर भी अपनी जान बचाने की कोशिश में भाग-दौड़ करने लगे और सब तो जैसे-तैसे निकल गए परंतु पिंजड़े में बंद एक शेरनी छटपटाती रही। शेर आग से बड़ा डरता है। उसके साथ बच्चे भी थे। स्वयं अकेली का कोई बस न चलते देख शेरनी ने पिंजड़े में ही एक जोर की छलांग लगायी और बाहर आ गयी। अपने एक बच्चे को मुँह में दबाकर वह तेजी से बाहर भागी।

सुरक्षित स्थान पर बच्चे को छोड़कर फिर वह आग की लपटों में घुसी। दूसरा बच्चा अभी पिंजड़े के आस-पास ही चक्कर काट रहा था। वह उसे भी मुँह में दबाकर पहले वाले स्थान पर पहुँच गयी। अपने परिजनों और संतानों की चिंता छोड़कर खुद को बचाने के लिए सचेष्ट समझदार मनुष्यों को शेरनी अपनी अपेक्षा ऊँचे

आसन पर बैठी दिखाई दी। इस प्रकार आग से घबड़ाने वाली जंगल की साम्राज्ञी शेरनी का यह साहसपूर्ण कृत्य कईयों ने अपनी आँखों से देखा।

उपरोक्त घटनाएँ सिद्ध करती हैं कि साहस और शौर्य प्रत्येक प्राणी में प्रचुर और प्रचंड मात्रा में विद्यमान है। दूसरे संस्कारों की प्रबलता के कारण भले ही वह डर हर समय सामने न आए, परंतु है अवश्य। सृष्टि की सर्वोत्कृष्ट कृति और परमात्मा के सर्वाधिक सन्निकट होने के कारण मनुष्य में तो ये गुण और भी अधिक मात्रा में होना चाहिए।

विशेष परिस्थितियों में आकस्मिक रूप से परिजनों-साथियों के प्रति प्रेम और वात्सल्य की प्रेरणा निर्बल, असहाय और दयनीय स्थिति वाले पशु-पक्षियों को भी इतना साहसी बना देती है तो क्या कारण है कि मनुष्य पग-पग पर शौर्यहीन, कायर और भीरु बना रहता है। निःसंदेह इसका कारण आत्म-अविश्वास और अत्यधिक स्वार्थ लिप्सा ही है। जब व्यक्ति को केवल अपनी ही चिंता, अपना ही हित, अपना ही भला दिखाई देता है तो वह दुनियाँ का सबसे निर्बल और असहाय मनुष्य बन जाता है और उसका संपूर्ण जीवन अस्वाभाविकताओं से भरे संघर्षों का अभिशाप बन जाता है।

शौर्य और साहस का अभाव, स्वार्थ-लिप्सा और पद-पद पर आने वाले संघर्ष वस्तुतः मनुष्य के मूल स्वभाव के प्रतिकूल ही तो हैं। यदि हम इन अस्वाभाविकताओं को दूर कर सकें तो शौर्य, साहस और पराक्रम कोई प्राप्तव्य गुण नहीं रह जाएगा। वह तो इस अँधेरे के दूर होते ही स्वयं आ जाएगा।



मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।